चन्दामामा
सितम्बर १९९०

WANTED

Teddy and his cronies Wobbit, Bow Wow, Papa Hare and Jumbo are on the loose in this city. They've already broken into several homes. Don't be misled by their soft and cuddly looks. They're trained to take on the toughest torture test ever — childhandling. It's also rumoured that they cast a magical spell over kids that can't be reversed. So... watch out. You may be the charmers' next target.

Stuffed toys

CHANDAMAMA TOYTRONIX
In collaboration with Sammo Corporation, S.Korea

Because making toys is no child's play

Chandamama Toytronix Private Limited, Chandamama Buildings, 188, NSK Salai, Vadapalani, Madras - 600 026.

Mudra:M:CTPL:4989

अब पेश करते हैं

डायमंड कामिक्स डाइजेस्ट में फैन्टम की रंगीन चित्रकथाएँ 96 पृष्ठों में रोमांचकारी कारनामों के साथ हिन्दी व अंग्रेजी में साथ-साथ हर माह प्रकाशित की जाएगी।

फैन्टम की रोमांचकारी कहानियों का रंगीन पिटारा

फैण्टम 3
चलता फिरता प्रेत
स्टिकर फ्री!
दुनिया में तहलका मचा देने वाला अद्भुत पात्र

फैण्टम 2

फैण्टम 1

फैण्टम

मामा भांजा और बालक का बलिदान	5.00
राजन इकबाल और ब्लैक स्नैक	6.00
फौलादी सिंह और लम्बू का अपहरण	5.00
पिकलू और चमत्कारी चाबी	5.00
अंकुर और भूत बंगला	5.00
पलटू और दैत्य का बदला	5.00
लम्बू मोटू-VII (डाइजेस्ट)	12.00

अगस्त-माह में प्रकाशित अन्य कामिक्स

ताऊजी और लालची जादूगर	6.00

डायमंड कामिक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

चन्दामामा

सितम्बर १९९०

★

अगले पृष्ठों पर

★

एक प्रतिः ३-००

वार्षिक चन्दाः ३६-००

MAGGI CLUBBERS
MAGGI
CLUB
FUN LOVERS
लॉज़ ऑफ़ दि जंगल गेम
स्नैप सफ़ारी गेम
मैगी क्लब: आओ मनाएं जंगल में मंगल!
अपने उपहार मुफ़्त लो!
मैगी नूडल्स के 5 खाली रैपरों के आगे वाले हिस्से से यह चिन्ह काटो और अपनी पसंद के मुफ़्त उपहार पाने के लिए हमें भेज दो. 6 से 8 हफ़्तों में तुम्हें मैगी क्लब की ओर से एक रोचक व आकर्षक उपहार मिल जाएगा.
यह मत भूलो :
अगर तुम मैगी क्लब के सदस्य नहीं हो तो हमें लिखते समय अपने मनचाहे उपहार के नाम के साथ अपना नाम और पता ज़रूर लिखना. और यदि तुम पहले से मैगी क्लब के सदस्य हो तो अपना मेम्बरशिप नम्बर भी साथ भेजना.
डिज़्नी टुडे कॉमिक
फ़ॉरेस्ट फ़ेसिज़ कैप और मास्क
जंगल स्टैन्डीज़ सेट
MAGGI
2-minute noodles
हमारा पता है : दि मैगी क्लब
पी.ओ. नं. : 5788, नई दिल्ली-110055
और यही नहीं : अगर तुमने अभी तक 'ट्रैवल इंडिया गेम' नहीं लिया है तो आज ही लो!
HTA 6679 HIN

RAMBO IV
No more evil, injustice and crime will be tolerated in this city. The relentless crusader is here. With his famed Zap Gun (the three sound gizmo that's the terror of the underworld) and his fleet of rough 'n tough ready-for-action vehicles — Wrecker, Super Dumper and Fire Engine. And of course, his missile-firing Helicopter. So...breathe easy. The one man army is here.
SAMMO
Mechanical and electronic toys
CHANDAMAMA TOYTRONIX
In collaboration with Sammo Corporation, S.Korea
Chandamama Toytronix Private Limited, Chandamama Buildings, 188, NSK Salai, Vadapalani, Madras 600 026
Mudra:M CTPL 4093

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

तैंतालीस सालों की स्वतन्त्रता

महोन्नत प्राचीन संस्कृति के लिए हमारा देश प्रसिद्ध है । किन्तु, आज की हमारी हालत क्या है? हमारे देश में विज्ञानशास्त्र के परिज्ञान की कमी नहीं है, तकनीकी नैपुण्य का अभाव नहीं है । हमारे देश के अनेक मेधावी युवा वैज्ञानिक देश-विदेशों में अपनी अद्भुत्-अपूर्व योग्यता को साबित कर चुके हैं ।

हमारा क़ानून देश के सभी नागरिकों को समान रूप से मौक़ा देता है ।

प्राकृतिक सम्पन्नता की बात हो तो, दुनिया के दूसरे देशों की तुलना में हमारा ही देश सुसम्पन्न है — जीवनदायिनी नदियाँ, उपजाऊ भूमि और खनिज संपत्ति से!

फिरभी, इन सभी चीज़ों के बावजूद हमारा राष्ट्रीय जीवन ठीक क्यों नहीं रहा? इसका कारण क्या है? लोगों में, दिन ब दिन, हिंसात्मक प्रवृत्ति बढ़ती क्यों जा रही है? हम कहाँ असफल रहे हैं?

हम असफल रहे हैं, अपनी ही अन्दरूनी स्वार्थपरता का दमन करने में! आज हम बड़ी दर्दनाक़ हालत में हैं, अनेक तरह के स्वार्थ का हम शिकार बन रहे हैं, जैसे-व्यक्तिगत स्वार्थ, क़ौमी खुदगर्ज़ी, साम्प्रदायिक स्वार्थपरता, व्यावसायिक स्वार्थपरता आदि । ईमानदारी से हम दूर हटते जा रहे हैं । दूसरों को ही नहीं, बल्कि अपने लोगों को और आख़िर खुद को भी धोखा देने से हम चूकते नहीं! इस क़दर बेईमानी का बादल हम पर छाया हुए है! और देर न करते हुए छानबीन कर अपने दोष नष्ट करने का अब समय है!

वर्ष : ४३ सितम्बर १९९० अंक : ११

एक प्रति : रु. ३/- वार्षिक चन्दा : रु. ३६/-

अपनी श्रेणी में सर्वोत्कृष्ट पेंसिलें

हर एक के लिए, सबके लिए

श्रीलंका के प्राचीन इतिहास का पता 'महावंश' नामक ग्रंथ से चलता है । इस ग्रंथ के अनुसार, एक बार पूर्वी भारत का विजयसिंह नामक एक युवराज अपने सात सौ साथियों के साथ नये तटों का अन्वेषण करने निकला और श्रीलंका पहुँचा । उसने वहाँ की गिरिजन कौम की एक युवरानी से मित्रता की, और उस की मदद से एक नये राज्य की स्थापना की । कुछ

समय के बाद उस ने उस गिरिजन युवती को छोड़ दिया और दक्षिणी भारत के मदुरै के पांड्यराजा की पुत्री से विवाह कर लिया। विजयसिंह के सात सौ साथियों ने भी मदुरै से लायी गयी सात सौ तमिल कन्याओं से शादियाँ कर लीं। उन की संतान के वंशज ही आज के सिंहल हैं। कहा जाता है कि विजयसिंह के नाम पर ही उस द्वीप का नाम 'सिंहल' पड़ा। रामायण काल में सिंहलद्वीप 'लंका' कहलाता था।

चूँकि श्रीलंका में अलग अलग मज़हबों व कौमों के लोग रहते थे, वहाँ के तमिलों की संस्कृति भिन्न थी। बहुत समय से एक धारणा रही कि पूर्वोत्तर प्रांत जाफना में रहनेवाले तमिलों के प्रति उचित प्रकार से बर्ताव नहीं किया जा रहा है, उन के प्रति अन्याय हो रहा है। श्रीलंका की सरकार की ओर से सिंहलों को काफ़ी प्यार व आदर मिलता था, पर वहाँ के तमिलों के प्रति सरकार पक्षपातपूर्ण बर्ताव करती थी। इस से तमिलों का दुख बढ़ गया, उन के संकट बढ़ते रहे। इस के परिणामस्वरूप वे विद्रोह कर उठे। अनेक तमिल उग्रवादी दल निर्माण हुए। ये विद्रोही दल 'तमिलों के अलग देश' की माँग करते हुए आगे बढ़े और सशस्त्र युद्ध के लिए तैयार हुए। फिर भी जाफना विभाजन के लिए विश्व-देशों का समर्थन नहीं मिला। इस हालत में भारत ने दखल दिया और तमिल प्रांतों को अलग स्थानिक शासन की व्यवस्था करवाई। इस से बहुतेरे तमिल प्रसन्न हुए। भारत के शांति सुरक्षा दल के पर्यवेक्षण में चुनाव हुए और नई सरकार स्थापित हुई।

लेकिन कहानी यहाँ ख़तम नहीं हुई। एल्.टी.टी.ई. (तमिल ईलम मुक्ति शेर) नामक उग्रवादी दल ने चुनावों का विरोध किया, उन का बहिष्कार किया। यह एक मज़बूत उग्रवादी दल था और चाहता था कि जाफना का अधिकार स्वयं हथिया ले। इस सिलसिले में जो भी इस दल का विरोध करते रहे, उन सब को बेरहमी से मौत के घाट उतारते हुए दारुण हत्याकाण्ड के रास्ते से यह दल आगे बढ़ रहा है। आख़िरकार विरोधी दल के जो नेता अपनी जान बचाने के लिए भारत में सर छिपाए बैठे थे, उन्हें भी भारत में ही बेरहमी से गोली मार कर कत्ल कर दिया गया।

भारत सभी तमिलों की ख़ैरियत चाहता है, इस लिए वहाँ के तमिलों का किसी तरह नेता बनने के उद्देश्य से सशस्त्र युद्ध के लिए उतरे किसी उग्र दल का समर्थन करना भारत के लिए न संभव है, और न उचित भी।

श्रीलंका की सरकार और एल्.टी.टी.ई. (तमिल ईलम मुक्ति शेर) की माँग पर ही तो भारत की शांति-सुरक्षा सेना श्रीलंका से वापस चली आई। लेकिन इस के बाद भी दोनों के बीच लड़ाई चल ही रही है। परिणामस्वरूप आम जनता अपार संकटों का शिकार बनती जा रही है।

भाले की चातुरी

कंचनपुरी में एक व्यापारी रहता था, उस का नाम था विशाल । उस का एक अकेला बेटा था अमर । इकलौता बेटा होने के कारण विशाल ने अमर को बड़े लाड़-प्यार से पाला । उसको किसी बात की कमी नहीं महसूस होने दी । कभी उस से सख़्ती से काम नहीं लिया । वह शौक से जितना पढ़ता उस पर विशाल को संतोष होता । परिणाम-स्वरूप अमर एक साधारण नौजवान बना । उसमें होशियारी नहीं आई । लोग कहते थे कि अमर में चातुरी नहीं है, वह भोला-भाला एकदम दब्बू लड़का है ।

एक दिन ग़ुस्सैल होकर विशाल ने बेटे से कहा -"अरे अमर, तुम तो एकदम बुद्धू हो । शक्ल-सूरत तो तुम ने मामा से पाई, पर अपने मामा की दुनियादारी और लोकचातुरी तुम में बिलकुल नहीं आई । कितना अच्छा होता कि मामा के कुछ गुण भी तुम में आते । एक बार मामा के घर जाकर तो देखो, वह कैसे योग्यता के साथ सारे काम संभालता है, कैसे हमेशा काम में लगा रहता है और कैसे सब ग्रामवासियों का प्रिय बन गया है ।"

अमर अपने पिता की बातों पर सोचने लगा । उस ने कई बार सुना था कि मामा जगपति बड़ा ही होशियार और व्यवहारकुशल है । इस लिए उस ने सोचा कि अपने मामा के बारे में ज़्यादा जान लिया जाए ।

एक दिन पिता ने अमर से कहा-"तुम्हारे मामा के गाँव से चार फर्लांग की दूरी पर एक गाँव है इंदिरापुर । तुम जानते ही हो कि वहाँ मिर्च और इमली काफ़ी सस्ते दाम पर मिलती है । अभी अपने मामा के पास जा कर पूछो कि अब तक माल क्यों नहीं भेजा गया है । लगभग एक महीना हो गया, हम माल की प्रतीक्षा कर रहे हैं । पेशगी कुछ रक़म भी

ललिता जैन

भेजी है । बाक़ी रक़म यहाँ तैयार है । माल हाथ में आते ही पूरी रक़म अदा की जाएगी । अब तक काफ़ी देर हो चुकी है । कहो कि अविलंब सारा माल भेज देने की कृपा करें । हाँ, और यह भी कह दो कि मिर्च के दो बोरे और चाहिए । पता नहीं, भाव बढ़ेगा या नहीं । थोड़ा पैसा भी साथ लेते जाना ।'' कहते हुए पिता ने बेटे के हाथ में कुछ रक़म थमा दी ।

अमर तुरन्त निकल पड़ा । मामा के गाँव तक पहुँचते अंधेरा गया । घर में दिये की रोशनी में उषा कोई पुस्तक पढ़ती दिखाई दी । वह पुस्तक पढ़ने में बहुत व्यस्त थी । कुछ समय तक किसी का आना भी उस ने नहीं जाना । अमर ने ज़रा खाँस दिया । तब उषा ने पुस्तक से नज़र हटा कर दरवाज़े की तरफ देखा । अमर को देखते ही उषा ने पुस्तक पढ़ना बन्द किया और अमर के घर के सभी लोगों का कुशल-क्षेम पूछा । अमर ने उषा को इधर बहुत दिन देखा न था । जब देखा था तब वह दस साल की छोटी लड़की थी । बहुत कम बोलती थी । अब उषा युवती हो चली थी । उस का रूप-रंग, बोलने का ढंग सभी अमर को बड़ा आकर्षक लगा ।

उसके सवालों का जवाब देते हुए अमर ने घर को परख कर देखा, और पूछा-''लगता है, घर में कोई नहीं है । सभी बाहर गये हैं क्या?''

उषा ने जवाब दिया-''हाँ अमर, सभी एक शादी में गये हैं । अभी थोड़ी देर में लौटेंगे ।''

अमर नहा-धोकर बैठ गया । उषा ने खाने की थाली लगा दी । अमर भोजन करने लगा । तभी एक बूढ़ी दरवाज़ा ढकेल कर अंदर आई ।

उसे देखते ही उषा हँसते हुए बड़े आदर के साथ उस के पास गई । बूढ़ी ने पूछा-''उषा, माँ आ गई? अब तक तो उसे आ जाना चाहिए था । तुम्हें अकेली छोड़ कर गई है । दीप जलने से पहले उसे लौटना चाहिए था ।''

''अभी तक नहीं आई, दादी माँ । आ जाएगी थोड़ी देर में । शादी ब्याह में जाएँ तो लौटने में विलंब होना स्वाभाविक है । कई जान-पहचान के लोग आये होंगे । लगता है, अब तक निकल चुकी होगी । आधा रास्ता

चल चुकी होगी । आप को क्या चाहिए दादी माँ?" उषा ने प्यार से पूछा ।

बूढ़ी ने पल भर के लिए अमर की तरफ़ देखा, ज़रा झिझकी । फिर उस ने उषा से कहा-"गाँव से ललिता और बच्चे आ गये हैं । घर में शक्कर बिलकुल नहीं है! घर में दूध तो है, बिना शक्कर के चाय कैसे बना दूँ । अगर पहले पता होता, तो खरीद रखती । अभी बड़ी मुसीबत में पड़ी हूँ ।"

"बस, यही है न? मैं दे दूँगी शक्कर ।" कहते हुए उषा रसोईघर में गई ।

फटे दामन से अपनी बाँहों को ढाँकते हुए बूढ़ी वहीं बैठ गई । थोड़ी देर में डिब्बे भर चीनी लाकर उषा ने बूढ़ी के हाथ में थमा दी और कहा-"लीजिए दादी माँ, यह रहा शक्कर!"

हाथ में डिब्बा लेते हुए संतोष के साथ बूढ़ी ने कहा-"जुग जुग जिओ बेटा!" और वहाँ से चल दी ।

अमर यह सब देखता ही रहा । बूढ़ी के जाने के बाद उस ने उषा से पूछा- "सुना कि मामाजी बड़े ही होशियार हैं । लगता है, मामाजी की होशियारी और चातुरी तुम में भी आगई है । वह बूढ़ी भी ग़रीब लगती है । तुम ने इतना शक्कर उसे दिया । क्या वह वापस आएगा?"

अमर के इस सवाल पर हँसते हुए उषा ने कुछ कहना चाहा, इतने में दरवाज़े पर दस्तक हुई । अब की बार एक क़ीमती साड़ी पहने गहनों से सजी-धजी मोटी औरत अंदर चली

आई । उस ने एक बार अमर को एड़ी से चोटी तक देखा, फिर पूछा-"यह लड़का कौन है?" फिर वह पासवाली एक कुर्सी पर बैठ गई ।

उषा से सवाल का जवाब सुनने से पहले ही उस औरत ने फिर पूछा-"हाँ, तुम्हारी माँ शादी से लौटी?"

"अभी तक नहीं आई है । लगता है, आप किसी काम से आई हैं!" उषा ने थोड़े में जवाब दिया ।

"कल सुबह तुम्हारे मामाजी के ख़ास दोस्त आनेवाले हैं । लड्डू और जलेबियाँ बनानी हैं, पर घर में चीनी बिलकुल नहीं है । दूकान से मँगाना भूल गई । दो सेर चीनी दोगी, तो कल का काम हो जाएगा । कर

उस बूढ़ी को शक्कर उधार देना तुम को उचित नहीं लगा था । अब मैं ने इस औरत को अभी शक्कर नहीं दिया, यह तुम्हें उचित लगता है कि नहीं?" उसी तरह हँसते हुए उषा ने पूछा ।

"मैं ने नहीं सोचा था कि इसे शक्कर उधार देने से तुम इनकार करोगी । उस बूढ़ी से उस की क्या तुलना? बूढ़ी तो एकदम कंगाल है और यह औरत अमीर है । भूल से दूकान से चीनी मँगवाना भूल गई होगी, इस लिए तुम्हारे पास उधार माँगने आई होगी । इसे उधार न देना एकदम अनुचित लगा मुझे! मुझे विश्वास है, उस बूढ़ी से शक्कर बिलकुल वापस नहीं आनेवाला है ।" अमर ने अपना विचार कह सुनाया ।

इस पर उषा मे ठठा कर हँसते हुए कहा-"लोग कहते हैं कि तुम एकदम भोले हो और लोकचातुरी तुम में ज़रा भी नहीं है । अब मुझे पता चला कि लोग ऐसा क्यों कहते हैं ।"

उषा की बात पर अमर का चेहरा फक पड़ गया । मारे शर्म के वह पानी पानी हो गया । उस ने उषा से पूछा-"अच्छा, मुझे यह तो बता दो कि मेरे विचारों में क्या खामी है?"

उषा ने मुस्कराते हुए कहा-"तो सुनो, असलियत क्या है! बूढ़ी ग़रीब ज़रूर है । मगर हमेशा उधार माँगने नहीं आती । तभी आती है जब बहुत ज़रूरत है । उधार लेने के बाद लौटाने तक उसे नींद नहीं आती । ऐसे लोगों को उधार देना तो दीन-दुखियों की सेवा

दोगी इतना इंतज़ाम?" मोटी औरत ने पूछा ।

"घर में शक्कर आज ही खतम हो गया है फूफ़ी । माँ ने कहा, कल मँगा दूँगी ।" जहाँ की तहाँ बैठ कर उषा ने जवाब दिया ।

इस उत्तर पर मोटी औरत का चेहरा फीका पड़ गया । जाते जाते उस ने कहा-"ठीक है, मैं और कहीं कोशिश कर लूँगी ।"

उस औरत के जाते ही उषा ने हँसते हुए अमर से पूछा-"देखा न, संयोग से तुम्हारे सवाल का जवाब अपने आप मिल गया?"

उषा की बात अमर समझ नहीं पाया । उस ने पूछा-"क्या? क्या कह रही हो तुम?"

"तुम्हारे सवाल का जवाब मैं बाद में दूँगी । पहले तुम मेरे सवाल का जवाब दो ।

करना है । अब उस धनी औरत के बारे में सुनो । वह अमीर तो है, पर अकसर उधार माँगने की उस की बुरी आदत है । फिर उधार लेने के बाद उसे भूल भी जाती है । पूछने पर झगड़े पर उतर आती है । ऐसे लोगों को उधार देना ओखली में सर देना है ।"

यह सब सुन कर सिर हिलाते हुए अमर ने कहा-"ओह, यह रही बात! इन दोनों के बारे में तुम बहुत कुछ जानती हो । मैं रहा एकदम नया, इन के बारे में मैं क्या जानूँ?"

उषा ने कहा-"ऐसा मत कहो जी, यहीं तो अपनी बुद्धिमानी दिखानी होगी । अगर तुम कभी अपने मामाज़ी की दूकान पर बैठोगे, तो तरह तरह के ग्राहक आयेंगे । जिन के बारे में तुम कुछ नहीं जानते हो, वे तुम से उधार माँगेंगे । तो तुम क्या करोगे? उन की बातों से, उन के बर्ताव से अंदाज़ लगाना चाहिए कि किस को उधार देना ठीक होगा और किस को देना ठीक न होगा । इसे कहते हैं दुनियादारी । इस के बिना सब व्यापार ठप हो जाएगा । व्यापारियों को ही नहीं, गृहस्थों को भी ऐसी होशियारी और सावधानी बरतना ज़रूरी है ।"

अमर को उषा की बातों ने काफी प्रभावित किया । उस ने उषा से पूछा-"उषा, तुम ने वह कहावत सुनी है-सख्यं सप्तपदीनाम्?"

"हाँ, सुनी थी कभी!" बातचीत का रुख बदलते देख कर आश्चर्य से उषा ने जवाब दिया ।
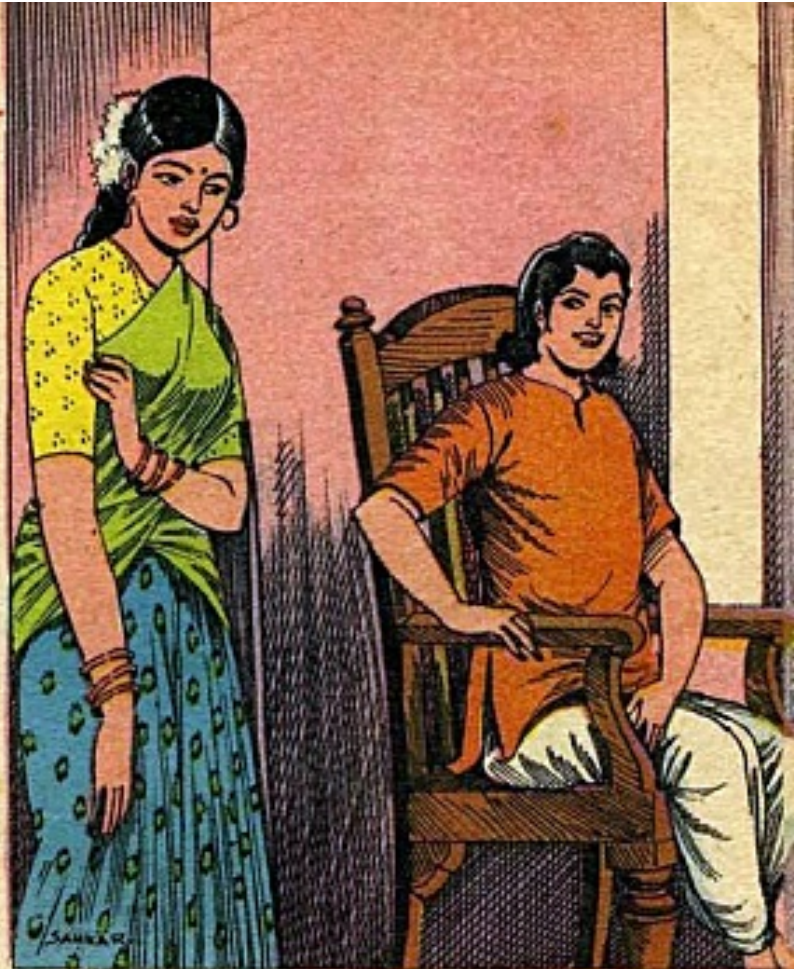
"अब तक हम दोनों सात पग तो डाल ही चुके हैं । अब तो हमारे बीच दोस्ती हो जानी चाहिए न?" अमर ने पूछा ।

इस पर उषा का आश्चर्य और बढ़ गया और उस ने स्वीकृतिसूचक सर हिला दिया ।

अमर ने कहा-"तब तो एक बात सोच लो । तुम तो जानती ही हो कि मैं व्यवहारकुशल नहीं हूँ । इस हालत में तुम्हें क्या करना चाहिए-दोस्ती के नाम पर? मेरी पत्नी बन जाओ, मेरी ज़िंदगी और मेरी दूकान को सुधारो, सँभालो । क्या यही उचित न होगा?"

अमर की बातों को सुन कर उषा कुछ शर्मा गई । मुस्कराते हुए उस ने कहा-"अमर, किस ने कहा तुम व्यवहारकुशल नहीं हो?

कितनी अच्छी तरह तुम ने मुझे बातों में बाँध कर अपना बना लेना चाहा? पहले अपने मामाजी से तो बात करो ।" फिर लज्जावश उषा वहाँ से दूसरे कमरे में चली गई ।

थोड़ी देर में अमर के मामा, मामी और साले सब आ गए । अमर ने मामाजी को अपने आने का कारण बता दिया ।

मामा ने अमर से कहा-"इस बार किसानों से माल मिलने में कुछ देर हुई । दाम में कोई परिवर्तन नहीं है । तुम अपने पिता से यह सब कह दो ।"

अमर ने अपने मामा की आँखों में देखते हुए कहा-"मामाजी, अगर मैं यहाँ की एक अमूल्य वस्तु आप से माँगूँ, तो क्या आप मुझे दे सकेंगे?"

आश्चर्य के साथ मामा ने अमर से पूछा-"मेरे पासवाली अमूल्य वस्तु! क्या है भला वह?"

"यह तो मैं बाद में बताऊँगा मामाजी! पहले तो यह बताइए कि आप मुझे वह वस्तु देना चाहेंगे कि नहीं?" अमर ने अपने सवाल को दोहराया ।

मामा जगपति ने हँसते हुए कहा-"अरे, तुम तो मेरे प्यारे भानजे हो । अगर मेरी बेटी का हाथ भी माँगोगे तो मैं 'ना' नहीं कर सकता । आख़िर कहो तो कि तुम्हें क्या चाहिए?"

आश्वस्त होते हुए अमर ने कहा-"बस, वही आप की बेटी का हाथ! उषाको हमारे घर की बहू बना दीजिएगा, मामाजी?"

इस पर जगपति पहले तो कुछ भौंचक्का रह गया । फिर ज़ोर से हँसते हुए उसने कहा-"वाह रे वाह भानजा! आज तक तो मैं सोचता रहा, तुम एकदम भोले हो । मैं ने ज़रा भी नहीं सोचा था कि तुम इतने नटखट भी हो सकते हो!"

घर लौट आने के बाद अमर के मुँह से सारी बातें सुन कर उस के माता-पिता भी खुश हुए । अमर के पिता ने हँसते हुए अपनी पत्नी से कहा-"बुज़ुर्ग कहते हैं-भोले की होशियारी पत्नी को चुनने में ही दिखाई देती है । शायद हमारे बेटे की होशियारी भी ऐसी ही होगी ।"

१२

(राजा शान्तिदेव ने जयानन्द मुनि के आश्रम में पलकर शिक्षा-दीक्षा हासिल करते हुए अपने बेटे को देखा । दिन ब दिन बढ़नेवाले वीरसिंह के अत्याचारों को रोकने के लिए वसन्त के नेतृत्व में सुमेध के नौजवान लड़ रहे थे । राजा को मुनि ने सलाह दी कि उन नौजवानों को जंगल में छिपकर रहते हुए लड़ाई जारी रखने में वह उनकी मदद करे । —इसके बाद)

पड़ोसी राज्यों को अपने काबू में लाने का और वहाँ की धन-दौलत लूटने का वीरसिंह का सपना, महज़ सपना ही रह गया । वीरसिंह के सिपाहियों को आम जनता से अनाज लूटने न देते हुए, सुमेध राज्य के नौजवान उन्हें जगह-जगह रोकने लगे । कहीं-कहीं सिपाहियों और नौजवानों की लड़ाई भी हुई । हर जगह सिपाहियों की हार हुई, और नौजवानों की जीत ।

विद्रोही नौजवानों का पता जानने की, वीरसिंह और उस का सेनापति कपालकंठ हर संभव कोशिश कर चुके थे, मगर उन्हें यश नहीं मिला । चूँकि वे नौजवान जंगल में जगह बदल-बदल कर रहते थे, उन्हें पकड़ना मुमकिन नहीं हुआ । वक्त आने पर वे सब एक सुंदर सी घाटी में मिल लेते थे । चारों ओर पहाड़ों, छोटे छोटे झरनों और घने वृक्षों से ढँकी जगह होने के कारण इन नौजवानों के

इकट्ठा होने के वह जगह किसी की नज़र में नहीं आती थी । उसमें प्राकृतिक गुफाऐं और कुछ सुरंग भी थे जिनमें वसन्त और उसके नौजवान साथी शरण लेते थे और अपनी जान बचाये रहते थे ।

सप्ताह में एक बार सारे नौजवान यहाँ जमा होते थे । वीरसिंह के जो सिपाही अमृतपुरी में शरणार्थी बनकर रहे थे, उन सब को भी इसी दिन यहाँ बुलाया जाता था और युद्ध का प्रशिक्षण दिया जाता था ।

बाकी के दिन वे सारे विद्रोही युवक तरह तरह के छद्मवेषों में इधर उधर घूमते रहते थे । वे कभी साधु-संन्यासी बनते, तो कभी तिज़ारती-सौदागर! कभी परदेशी बनते थे, तो कभी घुमक्कड़-यायावर! उनकी घुमक्कड़ी ज़्यादातर राजधानी शान्तिपुर और आसपास के अन्य गाँवों में चलती रहती थी । जब उन्हें पता चलता, कि वीरसिंह के सिपाही किसी को लूटने की योजना बना रहे हैं, वे जंगल में छिपे अपने नेता वसन्त को ख़बर कर देते थे । वसन्त अपने साथियों को छोटी-छोटी टोलियों में विभाजित करके सावधानी से वीरसिंह के सिपाहियों पर चौतरफ़ा हमला कर देता और उनके आयोजन को ध्वस्त कर देता था ।

इस प्रकार अब आठ साल गुज़र गये । सुमेध राज्य का जन-जीवन संकट-ग्रस्त था । दिन ब दिन हालत बिगड़ती जा रही थी । सुमेध अन्याय और अत्याचार का अड्डा बन बैठा । सेनाधिकारी बिना वजह किसी को भी हिरासत में कर लेते । वहाँ उन पर घृणित अत्याचार होते । प्रजा को दोनों जून खाना मिलना मुश्किल हो गया । लोगों के मन में हमेशा भय लगा रहता कि जाने कल क्या होगा!

एक दिन दोपहर के वक़्त लंबी दाढ़ी व दण्ड-कमण्डलु के साथ साधु बनकर वसन्त, कपालकण्ठ के प्रधान सैनिक-शिबिर के सामने के एक घर के चबूतरे पर बैठा था । दिन दहाड़े इतने धैर्य के साथ शिबिर के सामने आये साधु-वेषधारी वसन्त पर किसी को कोई सन्देह भी नहीं हुआ । सब को लगा कि वह सचमुच कोई साधु है और अपनी आध्यात्मिक प्रगति में लगा है । वह कोई चाल चल रहा है ऐसी किसी ने कल्पना तक न की ।

वहाँ पहरे पर रहे एक दलनायक ने वसन्त को देखा । उसे असली साधु समझकर उसके पास जाकर दलनायक ने पूछा, "साधु महात्मा, क्या आप हस्त-सामुद्रिक भी हैं?"

"हाँ, हूँ पुत्तर! क्या अपने हाथ की रेखाओं के आधार पर तुम्हें अपना भविष्य जानना है? मैं ज़रूर तुम्हारी मदद करूँगा ।" वसन्त ने गंभीर स्वर में कहा ।

सुनकर दलनायक का चेहरा खुशी से चमक उठा । साधु के प्रति उस के मन में अधिक आदर-भाव पैदा हुआ । उसने साधु को नम्रतापूर्वक प्रणाम किया और उस के सामने बैठ गया ।

"महात्मा, कृपया आप मेरे घर पधारिये न! मेरी हस्तरेखाएँ परखकर मेरा भविष्य बताने की कृपा कीजिये ।" दलनायक ने विनम्र बनते हुए कहा ।

वसन्त ने सोचा कि उसके साथ जाने से कुछ नयी बातें जान लेने की भी गुँजाइश है । इसलिए उठ कर खड़े होते हुए उसने कहा, "ठीक है, तुम जैसा चाहो । मैं तुम्हारे घर चलता हूँ और तुम्हारे परिवार के सभी सदस्यों की हस्त-रेखाएँ देख कर उनका भविष्य बता देता हूँ । मैं जो बताता हूँ वह सत्य ही हो निकलता है! अभीष्ट सिद्धिरस्तु!"

मगर इस तरह खड़े होते समय वसन्त का नकली जूड़ा छत से लटकती एक लोहे की छड़ में उलझ गया और सिर से अलग होकर लटकने लगा! यह नज़ारा देखकर दलनायक बौखला गया और उसे डाँटते हुऐ कहने लगा, "अरे! तू तो नकली संन्यासी है! कौन है रे तू?"

अब अपनी ओर से कुछ भी बोलने से फ़ायदा नहीं है, यह सोचकर वसन्त फौरन खुद को बचाने के लिए दौड़ने लगा ।

"पकड़ो उसे!..... वह शत्रुओं का गुप्तचर है । उसे पकड़ो...!" कहकर चिल्लाते हुऐ दलनायक वसन्त के पीछे दौड़ने लगा । दलनायक के पीछे दो सैनिक भी दौड़ने लगे । इस प्रकार थोड़ी देर भगदड़ मची, मगर अभी वे वसन्त को पकड़ने में कामयाब नहीं हुऐ थे, इतने में ही सामने से एक घुड़सवार को आते हुए दलनायक ने देखा ।

"अरे पकड़ो, पकड़ो । उसे पकड़ोगे तो तुम्हें अच्छासा पुरस्कार मिलेगा ।"

दलनायक उस घुड़सवार को हिदायत देने लगा।

दलनायक उस घुड़सवार को कोई राजसेवक समझ बैठा था। मगर वह तो वही नक़ाबपोश था जिसने एक बार वसन्त को बचाया था।

उसने वसन्त से कहा, "जल्दी करो, नदी पार कर उस पार के किनारे पर जाकर रुको। मैं इन को यहीं रोक लूँगा। मेरी चिंता मत करो। मैं अकेला इन सब के लिए भारी हूँ। अब यहाँ एक क्षण भर रहना ठीक नहीं।" और उसने अपना घोड़ा और आगे दौड़ाया। वह सीधे आकर दलपति के सामने खड़ा हुआ। "रुक जा! आगे मत बढ़ना।" कहकर नक़ाबपोश बड़ी फुर्ती से दलपति को चाबुक से मारने लगा।

चाबुक के एक ही फटके से दलपति धराशायी हो गया। पीछे के सैनिक अपने दलपति को उठाने लगे।

इसी वक़्त नक़ाबपोश भी अपना घोड़ा घुमाकर फिर उसे तेज़ी से भगाने लगा। नन्दिनी नदी के किनारे पहुँचकर घोड़े ने उसे पार किया।

तब तक वसन्त ने भी तैरकर नदी पार की। नक़ाबपोश ने घोड़े से उतर कर वसन्त को अपने हाथ का सहारा दिया। वसन्त हाँफ रहा था। मगर उसी वक़्त उस ने उस शूर वीर को देखा। आश्चर्य से उसने कहा, "महाराज! आप....?" और वह उसके पैरों पर गिर पड़ा। उसने कहा, "महाराज, आप ने तो अनेक बार मेरी जान बचायी है। अब आप के दर्शन लाभ से मैं अपने को बड़भागी मान रहा हूँ।" वसन्त की आँखों से आनंदाश्रु बहने लगे।

राजा ने वसन्त को प्यार से उठाया और कहा, "वसन्त, तुम्हारा धैर्य, साहस और कार्य-शक्ति सराहनीय हैं। जनता के प्रति तुम्हारा सेवाभाव अनूठा है। हाँ, मगर इतनी बात ज़रूर ध्यान में रखो, कि मेरे ज़िन्दा रहने की बात किसी पर प्रकट नहीं करना।"

"ऐसा क्यों महाराज? कुछ अपने खास लोगों को तो ज़रूर मालूम होना चाहिए कि आप ज़िंदा हैं। इस से उन के हौसले बढ़ेंगे।" वसन्त ने आश्चर्य से पूछा।

"लोगों को यदि पता चले कि मैं ज़िन्दा हूँ,

उन में अशान्ति फैल जाएगी और वीरसिंह भी मुझे पकड़ने के प्रयत्न में आम जनता को बेकार ही सताता रहेगा। इस लिए कम-से-कम आज यही ठीक होगा कि मेरा ज़िंदा रहना अपने लोगों को भी मालूम न हो। उचित समय आने पर इस राज़ को हम खोल देंगे।" राजा ने समझाया।

"महाराज, कम से कम जनता के लिये लड़नेवाले हम साथियों को यह मालूम रहना चाहिये कि आप ज़िन्दा हैं। यह जानकर मेरे साथी बहुत ही प्रसन्न हो जायेंगे। आप जैसे न्यायप्रिय राजा हमारे साथ हैं, इस भावना से उनका हौसला दुगुना हो जाएगा। आप के साथ लड़ने में हमें और जोश आएगा। सिर्फ़ एक ही बार आप मेरे साथियों के सामने आ जाइये। मुमकिन हो तो आप ही हमारा नेतृत्व कीजिये। और कितने दिन हम इस तरह वीरसिंह के सैनिकों से आँख-मिचौनी खेलते रहेंगे? उस दुष्ट को जल्द ही गद्दी से उतारना चाहिये।" वसन्त ने ताव में आकर कहा।

थोड़ी देर सोचकर राजा ने कहा, "हाँ, तुम्हारा कहना सही है। तुम सभी नौजवानों को इकट्ठा करके और अमृतपुरी के सैनिकों को भी साथ लेकर वीरसिंह के दुष्ट शासन का अन्त करना ही होगा। अपनी प्रजा के दुर्दिनों का अंत करना हमारा प्रथम कर्तव्य है।"

यह सुनकर वसन्त का चेहरा खुशी से खिल उठा। अपूर्व आनन्द से उसने राजा को और एक बार प्रणाम किया।

* * *

वह पूनम की रात थी। वसन्त के साथी, जो लगभग सौ होंगे, घाटी के अपने गुप्त अड्डे पर इकट्ठा हुए थे। वे सभी राजा शान्तिदेव की प्रतीक्षा कर रहे थे।

अचानक एक शिला के पीछे से आवाज़ सुनायी दी- "वसन्त!" आवाज़ वसन्त ने पहचान ली और राजा से मिलने वह उस ओर चल पड़ा। शान्तिदेव को देखते ही वसन्त ने प्रणाम किया।

"वसन्त, जल्दी करो! संकट हमें चारों ओर से घेर रहा है। वीरसिंह की सेना इसी ओर बढ़ रही है। एक साथ घाटी के दोनों सँकरे रास्ते बन्द करके, तुम सब को मार डालने की योजना वीरसिंह ने बनायी है। सेना को लेकर कपालकण्ठ आ रहा है। अब पहले वे
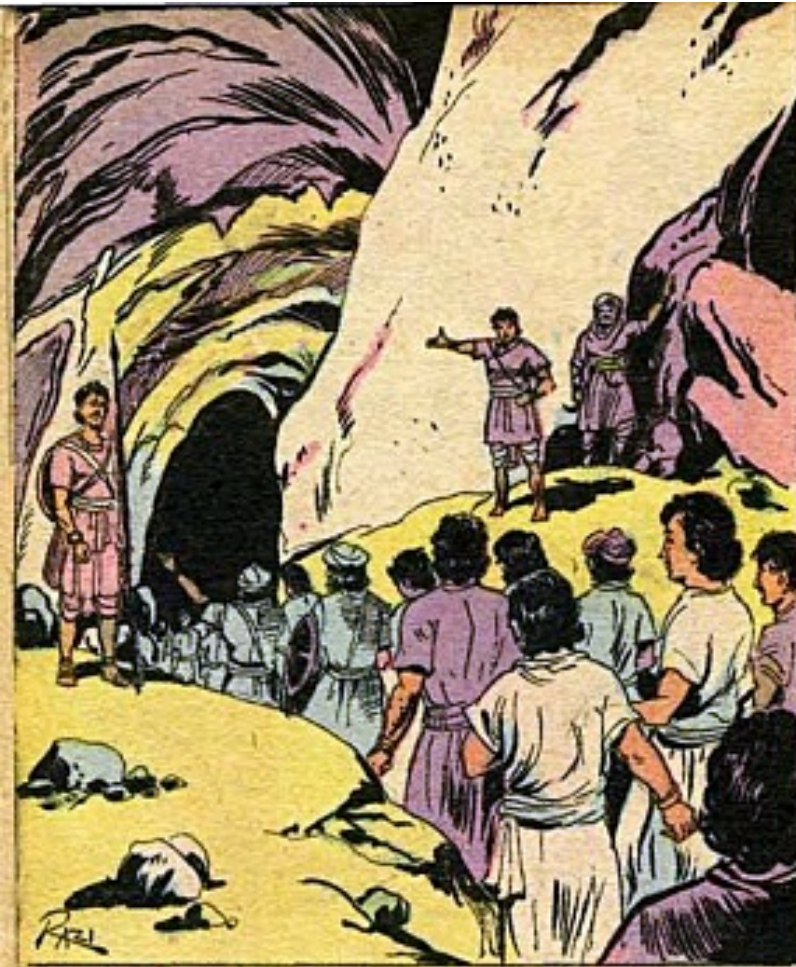
पश्चिमी द्वार पर पहुँच रहे हैं । पूर्वी द्वार तक पहुँचने में इन्हें थोड़ा और समय लगेगा । मैं खुद पश्चिमी मार्ग पर खड़ा होकर उन्हें अन्दर घुसने से रोक दूँगा । इस थोड़े समय का सदुपयोग करके तुम लोग सीधे पूर्वी मार्ग से बचकर निकल जाओ । ज़रा भी देर करने से ख़तरा हो सकता है । जल्दी जाओ वसन्त!" राजा शान्तिदेव ने गंभीरता से उसे कहा ।

वसन्त की समझ में बात आ गयी, कि समय अनुकूल नहीं है । देर करने से सभी साथियों के प्राण ख़तरे में पड़ेंगे । इस लिए मुड़कर उसने साथियों से कहा, "दोस्तो, हम पर अभी संकट का पहाड़ टूट रहा है । जल्दी करो और पूर्वी द्वार से निकल कर अपने प्राण बचा लो । सुरक्षित स्थान देखकर अलग अलग छुप जाओ!"

अपने नेता की आज्ञा पाकर सभी युवक फुर्ती से पूर्वी मार्ग की ओर दौड़ पड़े । वसन्त खुद राजा के पास ही खड़ा रहा ।

"तुम भी जाओ वसन्त!" राजा ने चिल्ला कर कहा ।

"प्रभु, मेरी जान भी क्यों न चली जाए, मैं आप को इस हालत में अकेले छोड़कर नहीं जाऊँगा ।" वसन्त ने दृढ़ स्वर में कहा ।

इतने में घाटी के पश्चिमी द्वार के पास शत्रुसेना की हलचल सुनाई दी । राजा ने म्यान से तलवार खींच ली और वह द्वार के पास खड़ा हो गया । द्वार का मार्ग सँकरा था, इस लिए राजा के पीछे ही वसन्त खड़ा हो गया ।

"आगे चलो, घाटी में घुसकर चलो! उन सभी विद्रोहियों को गाजर-मूली की तरह काट दो! किसी को जीवित न छोड़ना ।" कपालकण्ठ ने गरजकर अपनी सेना को आज्ञा दी । वह खुद तो सब से पीछे ही खड़ा था!

घाटी में घुसने के लिये एक सिपाही आगे बढ़ा । लेकिन राजा ने ज़ोर से लात मारकर उसे गिरा दिया । गिरते गिरते वह ज़ोर से चिल्लाया ।

राजा के सूचना देने पर वसन्त ने गरजकर कहा, "अन्दर मत आना! वरना जान से हाथ धोना पड़ेगा ।"

"वसन्त! यह तो तुम्हारे जीवन की आख़िरी रात है । आख़िरी रात ही नहीं, बल्कि आखिरी पल भी है ।..." चीखते हुए कपालकण्ठ आगे बढ़ा । उसने सोचा कि द्वार पर रहे शत्रु

हाथयारबन्द नहीं हैं, तभी तो अन्दर घुसने वाले सिपाही पर शत्रु से बार करने के बदले उन्होंने उसे लात मारकर गिरा दिया है। इसलिए अब कपालकण्ठ ने सोचा कि वसन्त को पकड़ना या मार गिराना बहुत ही आसान है। ऐसा करने से वीरसिंह भी खूब खुश होगा।

"हे कपालकण्ठ! अपनी जान बचा लो! तुम्हें मारने का मक़सद नहीं है। तुम जैसे आये हो, वैसे चले भी जाओ।" वसन्त ने उसे सचेत करने की कोशिश की।

फिर भी कपालकण्ठ रुका नहीं। उल्टे, द्वार की ओर निशाना साध कर उसने एक बरछा फेंका। हवा को चीरते हुए जाकर, वह बरछा द्वार के पास खड़े राजा शान्तिदेव की छाती में धँस गया! राजा वहीं लुढ़क पड़ा। कपालकण्ठ ने सोचा, कि लुढ़कनेवाला ज़रूर वसन्त ही है और बड़े उत्साह के साथ वह आगे बढ़ा।

"अरे दुष्ट! यह तुमने क्या किया?" कहकर चीखता हुआ वसन्त ताव में आ गया और तलवार खींचकर उसने पलभर में कपालकण्ठ का सिर धड़ से अलग कर दिया। कपालकण्ठ का मस्तक तेज़ी से लुढ़कता हुआ उसी की सेना के सामने जा रुका!

तुरन्त उसकी सेना में भगदड़ मच गयी। सिपाही चिल्लाने लगे, "हमारा सेनापति मर गया, सेनापति मर गया!" और फिर किसी अज्ञात डर और दहशत से वे सारे दौड़ने लगे।

पूर्वी द्वार से घाटी में प्रवेश करने वाले वीरसिंह के सिपाही बिना किसी रोक-टोक के सीधे घुस आये। जब कोई भी शत्रु उन्हें नहीं मिला, तब वे चकित होकर वापस लौट पड़े।

इस बीच वसन्त ने राजा को उठा कर कंधे पर डाल दिया। पासवाली एक गुफा में जा कर राजा को नीचे लिटा दिया और पीने को पानी दिया। जब उसे पता चला कि सभी चले गये हैं, उस ने कुछ सूखी लकड़ियाँ इकट्ठा की और आग लगा दी, ताकि राजा को गर्मी मिले।

वसन्त की जाँघ पर सिर रख कर लेटे-लेटे राजा शान्तिदेव ने कहा— "वसन्त, अब मौत मुझे बुला रही है। मैं चला जा रहा हूँ। तुम लड़ाई जारी रखो। मैं ने इतने दिन जंगलों में छिप कर ज़िंदगी बिताई। अब मुझे नहीं

लगता कि वीरसिंह बदलेगा । भोले-भाले लोगों को वह पीडा देता ही रहेगा । उस की यंत्रणाओं से लोगों को मुक्ति मिलनी चाहिए । इसी लिए मैं चाहता हूँ कि अंतिम साँस तक तुम यह लड़ाई लड़ते रहो । यही मेरा अंतिम संदेश है ।"

राजा की छाती पर वसन्त ने पट्टी बाँध रखी थी, फिर भी ज़ख़्म से खून बहता ही रहा था । राजा का कंठ-स्वर मंद पड़ गया था ।

"महाराज, आप ही हमें छोड़ चले तो हम किस के लिए लड़ें? हम वीरसिंह को सिंहासन से नीचे खींच लाएँगे, पर उस रिक्त स्थान की पूर्ति भला कैसे करेंगे? राजा किस को बनाएँगे? आप से पहले ही महारानी और युवराज का निधन हो चुका है न?" वसन्त ने दुख के साथ कहा ।

राजा शान्तिदेव ने कहा– "नहीं वसन्त, यह बात सच नहीं है । रानीं तो स्वर्ग सिधार चुकी, परंतु युवराज की सुरक्षा का प्रबंध करके ही वह चल दी । फिलहाल एक मुनि के आश्रय में युवराज पल रहा है । वक़्त आने पर तुम्हें ही युवराज का सहारा बन कर रहना चाहिए । जनता के कल्याण के लिए तुम्हें लड़ाई जारी रखनी है ।"

"क्या कहा आप ने? युवराज सचमुच ज़िंदा है? कितना सुखद समाचार है यह! युवराज को गद्दी पर बिठाने के लिए अब हम ज़रूर लड़ाई जारी रखेंगे । प्रभु, युवराज अब कहाँ है?" वसन्त ने उत्साह से पूछा ।

राजा शान्तिदेव ने सारा समाचार विस्तार के साथ वसन्त को बताते हुए कहा– "युवराज की शिक्षा का अच्छा प्रबंध हो गया है । वह विविध विद्याओं का अध्ययन कर रहा है । सुचिन्तित योजना के अनुसार मैं ने उसे यह जानने नहीं दिया कि उस के पिता ज़िंदा है । वह मुनि के पास कैसे आया, इस की कथा भी उसे मालूम नहीं । समय आने पर वह सब कुछ जान लेगा ।" रात के अंतिम प्रहर में आँखें मूँद लीं ।

(क्रमशः)

दर्पणवाला रूपम्

दृढ़संकल्पक विक्रम फिर उस पेड़ के पास गया । पेड़पर से शव उतारकर अपने कन्धेपर डाल लिया और हमेशा की तरह मौन होकर स्मशान की ओर चल दिया । उस समय शव में उपस्थित बैताल कहने लगा - "राजन्, मुझे लगता है कि तुम अपने पास की धन-दौलत और कीर्ति-प्रतिष्ठा से सन्तुष्ट नहीं हो । किसी कार्य-सिद्धि के हेतु ही तुम इस आधी रात को इतनी सारी परेशानी उठाकर ऐसी भयावह जगह पर घूम रहे हो । मगर मैं दावे के साथ कहता हूँ कि तुम को और ज़्यादा धन या कीर्ति प्राप्त होने पर भी तृप्ति नहीं मिलेगी । मनुष्य बड़ा विचित्र प्राणी है । अपने पास जो कुछ है, उस से उसे संतोष नहीं होता । ग़रीब आदमी चाहता है – अपने पास कुछ धन आ जाए । अमीर को भी और धन चाहिए, और और धन । वही बात यश और कीर्ति के बारे में भी है । जितना यश मिला, उस से मानव को संतोष नहीं मिलता,

बैताल कथा
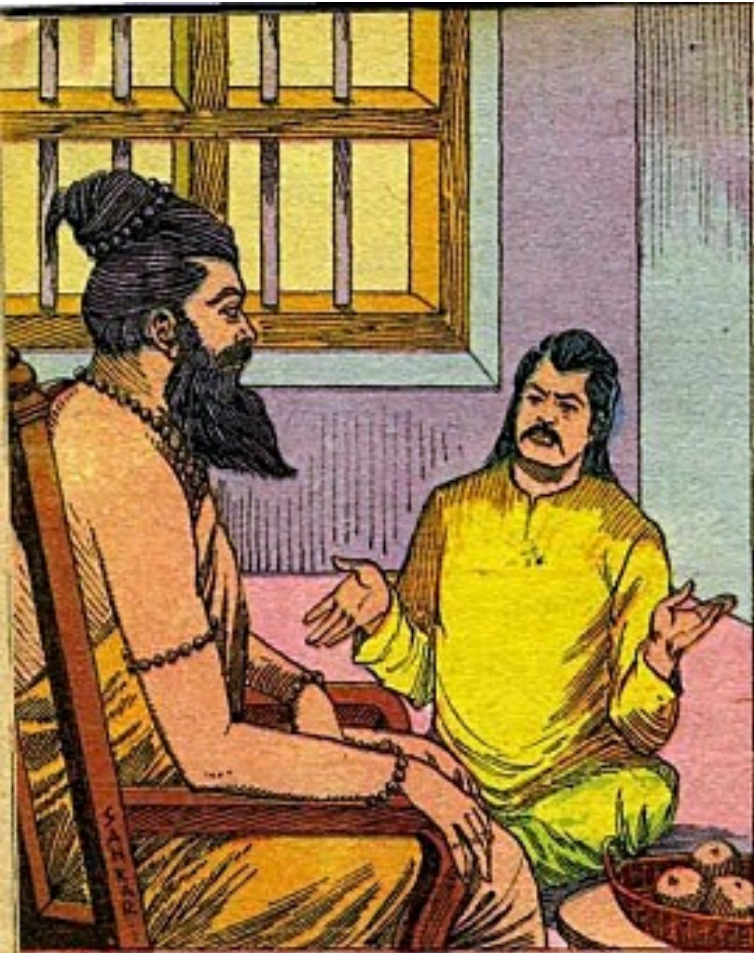
वह और यश और कीर्ति पाना चाहता है । यों जीवन एक अविरत कष्ट हो जाता है । इस विषय के पुष्ट्यर्थ मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ । ध्यान से सुनो ।" फिर बेताल कहानी सुनाने लगा—

धौलपुर में दयाराम नाम का एक आदमी रहता था । वह अपने अतिथि-सत्कार के लिए बहुत मशहूर था । इस लिए लोग उसे सत्कारवाला दयाराम कहते थे । रूपम दयाराम का दायाद था । वह भी दयाराम की तरह नाम पाना चाहता था । इस लिए वह भी आनेवालों की आव-भगत करने लगा । इस मे उस का धन तो खर्च होने लगा, पर उसे प्रसिद्धि मिलने से रही ।

एक दिन रूपम के घर एक साधु महाराज आये । रूपम ने साधु को भरपेट भोजन खिलाया, फिर उस को अपनी व्यथा बता दी । उस ने साधु से कहा—"स्वामीजी, मेरे मन में इच्छा है कि मैं भी दयाराम के समान प्रसिद्ध हो जाऊँ । मैं हमेशा अपने घर में अतिथियों की प्रतीक्षा करता हूँ । जो भी आता है उसकी ख़ातिर-तवाज़ा करने में मैं कुछ भी कसर नहीं रखता । फिर भी मैं मशहूर होने से रहा । बताइए, मैं क्या करूँ?"

रूपम की व्यथा सुन मुस्करा कर साधु ने कहा— "देखो रूपम, तुम नाम की चिन्ता क्यों करते हो? तुम से जैसे बने, लोगों की मदद करते जाओ । उन की ज़्यादा मदद करना, जो ज़रूरतमंद हैं । इस से तुम्हें खूब तृप्ति मिलेगी ।"

रूपम को साधु की ये बातें पसंद नहीं आईं । उस ने साधु से कहा— "महात्मन्, निष्काम कर्म तो आप जैसे साधु ही कर सकते हैं । मुझ जैसे साधारण आदमी के लिए यह संभव नहीं । हर आदमी की इच्छा होती है कि वह आसपास के लोगों में मशहूर हो जाए, लोगबाग उस की तारीफ़ करें । अगर नाम न मिले तो अच्छा काम करने का उत्साह मुझ में नहीं होता । मैं आप से प्रार्थना करता हूँ कि आप ऐसा कुछ करें जिस से अतिथि-सत्कार की मेरी इच्छा दब न जाए ।"

तब साधु महाराज ने रूपम को एक माया-दर्पण दे कर कहा— "तुम्हारे घर में जिस कमरे में अतिथि ठहरते हैं, उस में इस

दर्पण को रख दो । इस में कुरूप चेहरा भी सुंदर दिखाई देगा । हर आदमी को दर्पण में अपना चेहरा अधिक सुंदर देख कर प्रसन्नता ही होगी न? इस से तुम्हारा नाम सर्वत्र फैल जाएगा ।" इतना कह कर फिर साधु चला गया ।

उस दिन से रूपम के घर आनेवाले अतिथियों की संख्या बढ़ गई । हर कोई उस दर्पण में अपना सुंदर चेहरा देख कर प्रसन्न हो जाता । फिर लोग रूपम के घर के माया-दर्पण के बारे में इधर-उधर खूब कहने लगे । कुछ दिनों में रूपम 'दर्पणवाला रूपम' कहलाने लगा ।

धौलपुर के ज़मींदार को रूपम के दर्पण के बारे में मालूम हुआ । उस ने रूपम को निमंत्रण भेजा कि वह अपना दर्पण ले कर उसके पास पहुँच जाए । तुरंत रूपम माया-दर्पण के साथ ज़मींदार के पास चल दिया ।

ज़मींदार ने उस दर्पण में अपना चेहरा देख कर कहा– "इस में तो मुझे अपना चेहरा कुरूप ही दिखाई दे रहा है । ऐसा आख़िर क्यों हो रहा है भला?"

ज़मींदार के सभी कर्मचारियों ने उस दर्पण में अपने चेहरे देख लिये । किसी को दर्पण में अपना चेहरा अधिक सुंदर दिखाई न दिया ।

"ग़लत प्रचार कर के नाम कमाना चाहते हो?" ग़ुस्से में आ कर ज़मींदार ने कहा और दर्पण को उठा कर जोर से ज़मीन पर पटक दिया । लेकिन क्या ग़ज़ब! दर्पण टूटा नहीं । उदास हो रूपम दर्पण के साथ अपने घर चला आया ।

बहुत सुंदर बनी । ज़मींदार ने मारे खुशी के रूपम को कुछ धन दिया ।

इस दर्पण की एक विशेषता है । हर आदमी के चेहरे में कुछ सुंदरता होती है और कुछ कुरूपता । सिर्फ़ रूपम के घर में माया-दर्पण चेहरों की सुंदरता ही दिखाता है, अन्यत्र वह सिर्फ़ कुरूपता मात्र दिखाता है ।

ज़मींदार ने दर्पण के अपने प्रतिबिंब का चित्र बनवा लिया था, उन की देखादेखी औरों ने कुछ ऐसा ही सोचा । कुछ और लोगों ने भी अपने ऐसे चित्र बनवा लिये । इस तरह रूपम के घर आनेवालों की संख्या बढ़ गई । दूर-दूर के गाँवों से लोग उस के घर आने लगे और दर्पण में अपने चेहरे देख कर खुश होने लगे ।
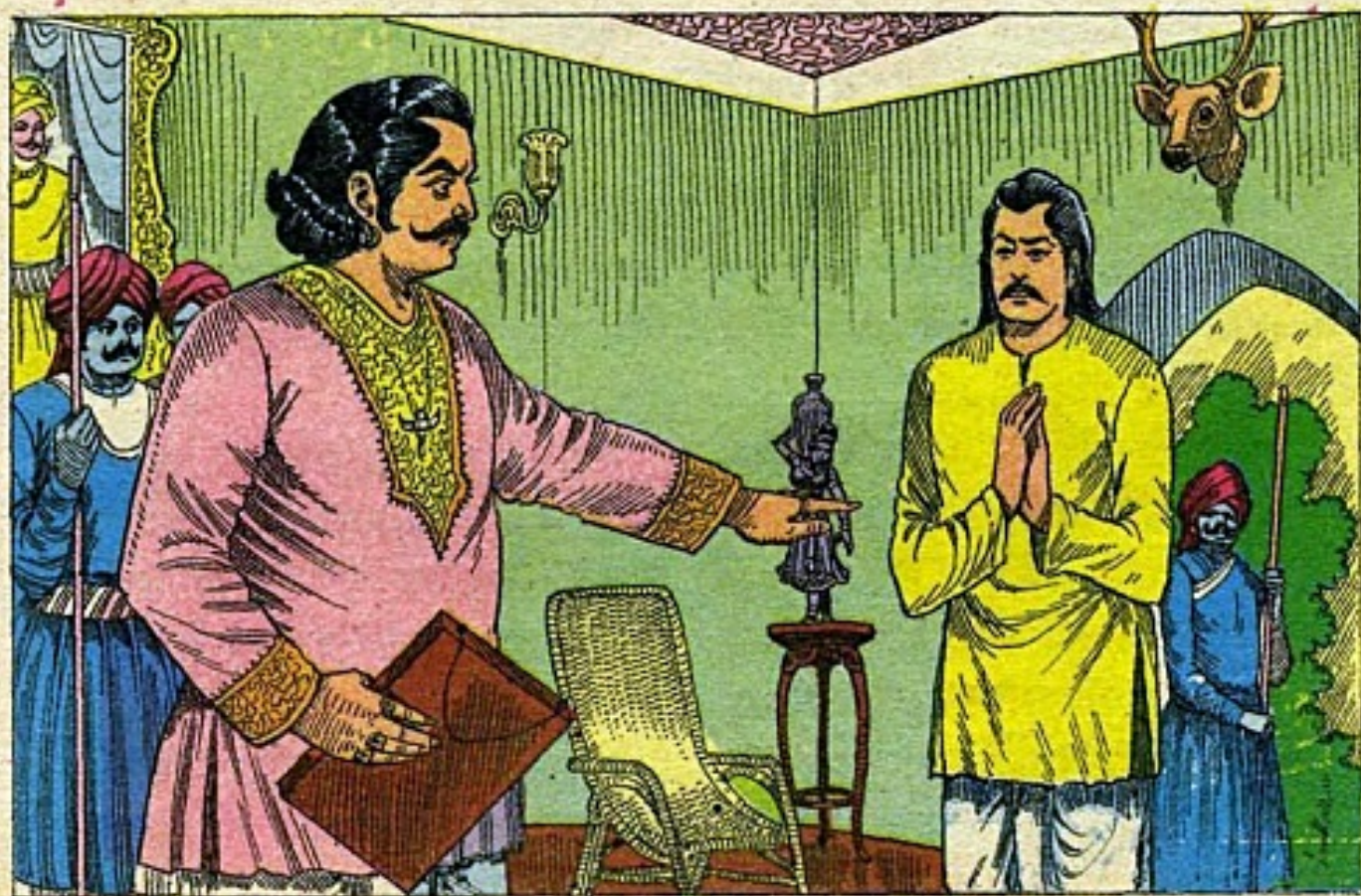
यह सब जान कर कुछ दोस्त रूपम के घर आये और उन्हों ने दर्पण में अपने चेहरे देखे । उन्हें तो दर्पण में अपने चेहरे सुंदर ही दिखाई दिये । अब एक राज़ का पता चला । रूपम के घर में ही दर्पण में देखनेवालों को अपने चेहरे सुंदर दिखाई पड़ते हैं, अन्य किसी स्थान पर उसी दर्पण में देखनेवालों को अपने चेहरे बदसूरत दिखाई देते हैं ।

ज़मींदार को दर्पण की यह खूबी मालूम हुई । इस पर ज़मींदार खुद रूपम के घर चला आया और उस ने दर्पण में अपना चेहरा देखा । अपना सुंदर चेहरा देख कर उसे खुशी हुई । उस ने एक बढ़िया चित्रकार को बुलाया और दर्पण में दिखाई देनेवाली अपनी छवि को कॅन्वस पर उतरवा दिया । तस्वीर

अब अपने घर आनेवालों का अतिथि-सत्कार करना रूपम के बस का काम नहीं रहा, क्यों कि आनेवालों की भीड़ रोज़ाना बढ़ती ही रही । अतः उन के आतिथ्य की चिन्ता करना रूपम ने छोड़ ही दिया । फिर भी उस माया-दर्पण की वजह से लोग खुश होते थे । संतोष के साथ चल देते ।

रूपम के मन में इच्छा हुई कि अपनी कीर्ति के बारे में लोग क्या कहते हैं, उसे अपने कानों से सुने । इस लिए घर की सब ज़िम्मेदारी अपनी पत्नी पर सौंप कर वह राजधानी के लिए चल पड़ा ।

राजधानी में रूपम से किसी ने पूछा— "अच्छा, तो आप धौलपुर से आ रहे हैं?

वह दर्पणवाला रूपम देखने में कैसा है? आप तो जानते ही होंगे उसे?"

इस पर रूपम खुश हुआ। फिर भी उस ने नहीं कहा कि वही स्वयं रूपम है। उसने जवाब दिया– "धौलपुर का नाम आते ही सब को रूपम का नाम याद आता है। मैं उसे कैसे न जानूँ?"

दर्पणवाले रूपम के बारे में जानने की इच्छा से उस आदमी ने रूपम को अपने घर आमंत्रित किया। उस घर में रूपम ने दयाराम का चित्र देखा। आश्चर्य का अभिनय करते हुए रूपम ने पूछा–"ये कौन हैं? यह चित्र आप के घर में कैसे?"

उस भलेमानस ने कहा– "आश्चर्य है, आप इन्हें नहीं जानते? ये आप के गाँव के ही सत्पुरुष हैं। दर्पणवाले रूपम के पास जानेवालों का आतिथ्य ये महाशय ही करते हैं। अतिथि-सत्कार शब्द के साथ तुरन्त इन्हीं का नाम याद आता है। इन के आतिथ्य के बारे में सुन कर राजा ने इन का सत्कार किया था। राजा ने पुरस्कार के रूप में इन को बहुत-सा धन दिया था, जिस को ये अतिथि-सत्कार के लिए खर्च कर रहे हैं। इन को लोग 'आतिथ्यवाले दयाराम' कह कर पुकारते हैं। इन के चित्र देश भर में अनेक घरों में आप को दिखाई देंगे।"

इस पर निराश हो रूपम ने सिर हिला दिया और गाँव के लिए वापस निकला।

रास्ते में रूपम को वह साधु दिखाई दिया, जिस से रूपम को माया-दर्पण मिला था। उसने पूछा– "क्यों भई, उदास-से लगते हो, क्या बात है? लोग तुम्हें 'दर्पणवाला रूपम'

कहते हैं, फिर भी अब तुम उदास क्यों हो?"

"महाराज, मैं अपनी व्यथा का कारण आप को नहीं बता सकता। अपनी प्रसिद्ध के बारे में जानने के लिए मैं राजधानी चला आया। पर यहाँ मैं ने जो कुछ देखा इस से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। दयाराम को जो नाम मिला, वह मुझे मिलने से रहा। सब कुछ देख कर मुझे बड़ा दुख हुआ। कृपया अपना माया-दर्पण वापस लीजिए।" रूपम ने प्रार्थना की।

फिर रूपम ने साधु को दर्पण वापस दिया।

यह कहानी सुना कर बैताल ने कहा— "राजन्, क्या दर्पणवाले रूपम का बर्ताव तुम को अजीब नहीं लगता? देश भर में रूपम का नाम फैल गया, फिर भी उस के मन में यह अतृप्ति क्यों? उस ने महिमावाला दर्पण साधु को वापस क्यों दिया? मेरी इस शंका का समाधान जानते हुए भी न करोगे तो तुम्हारा सिर फट जाएगा।"

इस पर राजा विक्रम ने कहा— "दर्पणवाले रूपम ने राजधानी के उस आदमी के घर जा कर एक तथ्य की बात जान ली। उस के घर पर भीड़ मचानेवाले लोग उस के लिए नहीं, दर्पण को देखने के लिए आ रहे हैं। इस लिए दर्पणवाले रूपम को जो यश मिला, वह दर्पण का है, रूपम का कदापि नहीं। और फिर वह दर्पण भी रूपम का अपना नहीं, किसी की दया के रूप में मिली परायी चीज़ है। आतिथ्यशील दयाराम की बात ऐसी नहीं है। जो कुछ कीर्ति-प्रतिष्ठा अब तक दयाराम को मिली थी, वह सब उस की अपनी निजी कमाई है। यह अंतर मालूम पड़ते ही रूपम को पता चला कि वह कभी दयाराम के समान निजी प्रतिष्ठा का हक़दार नहीं बन सकेगा। इसी अतृप्ति के कारण रूपम ने महिमावाला माया-दर्पण उस के मालिक साधु को वापस दे दिया।"

इस तरह राजा का मौन-भंग हो गया। फिर बैताल लाश के साथ अदृश्य हुआ और पेड़ पर चढ़ कर पूर्ववत् लटकने लगा।

(आधारः वसुंधरा की एक रचना)

(कल्पित)

अंधी सरकार

बात बहुत पुरानी है । करीम शहर के पासवाले एक गाँव में एक ग़रीब आदमी रहता था-शकूरा । काम की तलाश में वह राजधानी चला आया । वह चाहता था, नवाब के दरबार में कोई छोटी नौकरी मिल जाए, माहवार दो रुपये भी कमा कर पेट भर ले । उन दिनों माहवार दो रुपये कमाना भी अच्छी आमदनी समझी जाती थी ।

लेकिन बहुत कोशिश करने पर भी शकूरा को नौकरी नहीं मिल पाई । नौकरी के लिए उस ने कई जगह अपने प्रार्थना-पत्र पेश किए, पर किसी ने उस की मदद नहीं की । उस के सभी प्रार्थना-पत्र कूड़े की टोकरी में चले गए ।

आख़िर शकूरा ने साहस के साथ एक काम किया । उस ने एक सुनार से एक मुहर बनवा ली । ख़ास अदालत के बाहर एक मेज़ लगवा कर शकूरा अपनी मुहर के साथ बैठ गया । अर्जियाँ देनेवालों को बुला कर, उन की अर्जियों पर मुहर लगाने लगा । हर अर्जी पर एक-एक पैसा वसूल करने लगा । अर्जीनवीस समझने लगे कि यह सब सरकार का ही प्रबंध है, इस लिए हर कोई शकूरा की मुहर लगवा कर ही अपनी अर्जी दफ़्तर में पेश करने लगा । धीरे धीरे यह सब आदत-सा बन गया । अधिकारी भी इस मुहर के आदी बन गये । किसी ने यह नहीं सोचा कि वह मुहर क्यों लगाई जा रही है, किस अधिकारी से लगाई जा रही है और आख़िर यह मुहर लगानेवाला कौन है ?

शकूरा ने थोड़े ही समय में काफी धन जमा किया । उसे डर लगने लगा कि जब उस का राज़ खुल जाएगा तो बात नवाब तक चली जाएगी और फिर उसे फाँसी की सज़ा भी हो सकती है । तब उसे अचानक एक उपाय सूझा । शकूरा ने अपनी मुहर पर एक

२५ साल पुरानी चन्दामामा की कहानी

पैसे के बदले दो पैसे वसूलना शुरू किया। एक पैसा वह खुद लेता, और दूसरे पैसे की रक़म वह अलग जमा कर रखता।

यों दस साल बीत गये। एक दिन किसी वजह से शकूरा अदालत में नहीं जा सका। उस दिन की अर्जियों पर शकूरा की मुहर नहीं रही। कचहरी के गुमाश्तों ने कहा– "इन पर शकूरावाली मुहरें नहीं हैं। इन्हें हम नहीं ले सकते।" बात बड़े अधिकारियों तक पहुँची। तब पूछताछ शुरू हुई– "वह कौन-सी मुहर है? उसे कौन लगाता है?"

पुरानी अर्जियाँ मँगवा कर देखा गया, तो उन पर इस तरह लगी मुहरें मिलीं–'अंधी सरकार-पीतल का दरवाज़ा-शकूरा की मुहर!' यह कोई सरकारी मुहर तो थी नहीं। बात नवाब तक चली गई। नवाब ने आज्ञा दी कि शकूरा को गिरफ़्तार करके उस के सामने पेश किया जाए। शकूरा जानता था कि एक-न-एक दिन ऐसे सब होने ही वाला है। इस लिए नवाब के पास जाते समय दूसरे पैसेवाली जमा की हुई रकम साथ ले कर ही शकूरा वहाँ गया।

शकूरा को देखते ही नवाब ने पूछा– "कौन हो तुम? यह मुहर तुम ही लगाते हो न? तुम्हें यह अधिकार किस ने और कब दिया?"

इस तरह कई सवाल नवाब ने पूछे। तब शकूरा ने कुछ भी छिपाए बगैर सारी बात साफ़-साफ़ नवाब को बता दी और फिर कहा–

"हुज़ूर, आप के हिस्से में अब तक तीस हज़ार वसूल हुए हैं। यह रहा आप का हिस्सा!" और रुपयों की थैली नवाब के हाथों थमा दी।

शकूरा की बुद्धिमानी पर नवाब खुश हुआ। उस के लिए वही नौकरी पक्की कर दी। मुहर के 'अंधी सरकार .... ' से अंधी शब्द को हटा कर सिर्फ़ सरकार को ही रखा गया।

इस तरह शकूरा की मुहर बरसों तक चलती रही।

चन्दामामा परिशिष्ट-२२

ज्ञान का ख़ज़ाना

वह कौन था?

पुराने ज़माने में अथेन्स में एक दार्शनिक रहता था । रोज़ कई लोग अपनी समस्याएँ लेकर उसके पास आते थे । एक बार एक नौजवान उसके पास अया । "मान्यवर, मैं एक महान् वक्ता बनना चाहता हूँ । कई प्रान्त घूमकर, अनेक व्यक्तियों से मैं मिल चुका हूँ । उन सभी लोगों ने मेरी बुद्धिमानी की प्रशंसा की । अब भाषण-कला सीखने की मेरी इच्छा है ।" इस तरह उस नौजवान ने पन्द्रह मिनट तक अनेक बातें कह दीं और अन्त में कहा, "आप यदि मुझे भाषण-कला सिखा दें, तो मैं आप का बड़ा एहसानमन्द रहूँगा । इसके लिए आप जो शुल्क अदा करने को कहेंगे वह मैं खुशी से दे दूँगा ।"

"ठीक है, तुम्हें दुगुना शुल्क अदा करना पड़ेगा ।" दार्शनिक ने कहा ।

"दुगुना?" उस नौजवान ने आश्चर्य से पूछा ।

"हाँ! चूँकि तुम्हें पहले यह सिखाना होगा कि मौन कैसे रहा जाये । इस मौन-कला को सिखाने के पश्चात् ही तुम्हें भाषण-कला सिखानी पड़ेगी ।" उस दार्शनिक ने जवाब में कहा ।

क्या आप जानते हैं, कि यह दार्शनिक कौन था?

(पृष्ठ ३६ देखिये ।)

क्या आप जानते हैं?

१. एक देश का राष्ट्रीय चिह्न बना रहा पौराणिक पक्षी कौनसा है? उस देश का नाम क्या है?

२. सन् १९४६ ई. में एक प्रसिद्ध व्यक्ति से एक देश का अध्यक्ष बनने के लिये प्रार्थना की गयी, जो वास्तव में उस देश का निवासी भी नहीं था । वह व्यक्ति कौन था?

३. वह देश कौनसा है?

४. ऐसा क्यों हुआ था?

५. 'लंका' (श्रीलंका) शब्द का अर्थ क्या है?

(पृष्ठ ३६ देखिए)

अयोध्या नगर

'अयोध्य' का अर्थ होता है 'अजेय'। अयोध्या के बारे में कहा जाता था, कि उस पर शत्रु कभी जीत नहीं हासिल कर सकते। सरयू नदी के किनारे स्थित यह अयोध्या नगरी, महाराजा दशरथ आदि सूर्यवंशी राजाओं द्वारा शासित कोसल देश की राजधानी थी।

हमारे देश की पवित्र 'सप्तनगरियों' में अयोध्या एक है। श्री रामचन्द्र की यह जन्म-भूमि है, इसलिये भारतीय लोग अयोध्या को पवित्र भूमि मानते हैं। कहा जाता है कि श्रीराम का जन्मस्थान, उन का यज्ञस्थान, सीतामाई का रसोईघर वगैरह आज भी यहाँ मौजूद हैं।

बाद में कोसल की राजधानी साकेत को, और उस के बाद श्रावस्ती को बदली गयी थी। चौथी व पाँचवीं सदियों में अयोध्या नगरी गुप्तों की दूसरी राजधानी बनी।

चन्दामामा की खबरें

सब से छोटी उम्र का डॉक्टर

न्यूयॉर्क में पढ़नेवाला बालमुरलीकृष्ण अम्बटी नामक भारतीय विद्यार्थी वैद्यशास्त्र की पढ़ाई पूरी करके, दुनियाभर का सब से छोटी उम्र का डॉक्टर बन रहा है। यह ख़बर आप पढ़ेंगे, तब तक वह डॉक्टर बन भी चुका होगा। इस के पहले, इटली का एक इस्राइली विद्यार्थी अठारह वर्ष की आयु में डॉक्टर बन चुका था। बालमुरली सत्रह साल की उम्र में डॉक्टर बन रहा है।
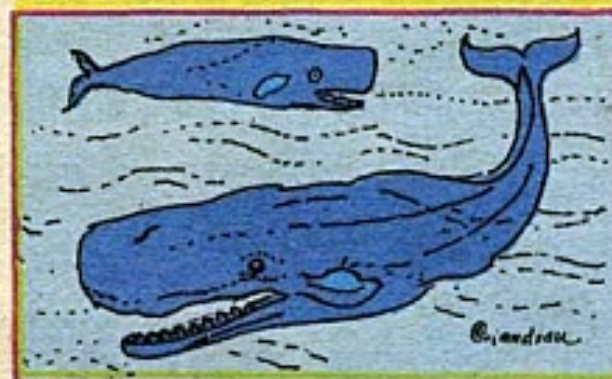
तिमिंगल का गान

तिमिंगलों के बारे में छब्बीस साल अनुसन्धान हुआ और उनके बारे में नयी बातें प्रकाश में आयीं। सभी तिमिंगलों के मुँह से एक ही प्रकार की ध्वनियाँ नहीं निकलती हैं। कुछ ध्वनियाँ मनुष्यों के मधुर गान जैसी होती हैं। अपनी भावनाएं तिमिंगल इस प्रकार अपने गायन से प्रकट करते हैं।
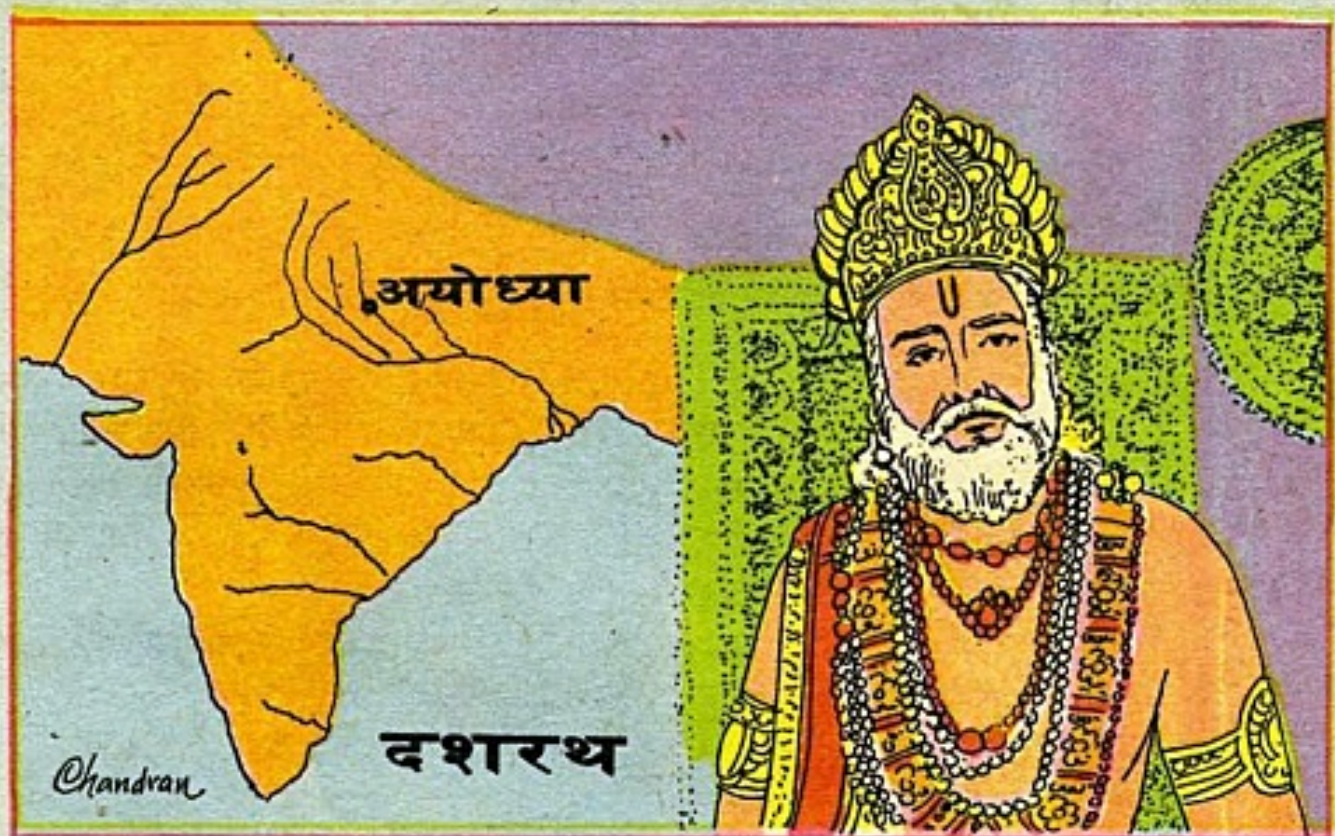
इस के बाद क्रमशः अयोध्या की शासकीय प्रमुखता लुप्त होती रही । फिर भी मथुरा की तरह अयोध्या अशेष भारतीयों के आदर-प्रेम का स्थान बनकर विराजमान रही, और इस तरह पीढियों से भारतीयों को स्फूर्ति और उत्तेजना पहुँचाती रही ।

एक वक्त ऐसा भी था जब अयोध्या बौद्ध तथा जैन धर्मोंका केन्द्रस्थान बन कर रही थी । चौबीस तीर्थंकरों में तेईस तो इक्ष्वाकु वंशी थे । उनमें आदिनाथ, अजितिनाथ, अविनन्दनाथ, अनंतनाथ तथा सुमतिनाथ नामक पाच बोधक ऐसे थे, जिन का जन्म अयोध्या में ही हुआ था ।

आज की अयोध्या, उत्तर प्रदेश में लखनऊ तथा गोरखपुर रेल्वे स्टेशनों के बीच की एक छोटी नगरी है ।

मध्य-युग में अयोध्या नवाबों के द्वारा शासित एक छोटा राज्य रहा । लखनऊ के राजधानी होते हुए भी अयोध्या अपने धार्मिक और सांस्कृतिक वातावरण के लिए महत्त्वपूर्ण बनी रही । स्थान-स्थान के विद्वान, कवि, तत्त्वज्ञ और यात्री अयोध्या के दर्शन के लिए आते रहे और श्रीरामचन्द्र के जन्म-स्थान पर आकर बड़ा ही आत्म-संतोष प्राप्त करते रहे ।

श्रीरामचन्द्र और सीतादेवी के यहाँ के मंदिर तो प्रसिद्ध हैं ही । उनके अलावा, श्रीराम के पुत्र कुश द्वारा निर्मित समझा जानेवाला नागेश्वरनाथ मन्दिर और हनुमानगढ़ में स्थित, नवाब शुजाउल्ला द्वारा निर्मित हनुमानजी का मन्दिर भी यहाँ काफी मशहूर हैं ।

अयोध्या से २५ कि.मी. की दूरी पर नन्दीग्राम है । श्रीराम जब बनवास में थे, तब चौदह वर्ष तक राज्य का शासन भरत ने यहीं से किया था, ऐसा माना जाता है ।

कुछ सवाल साहित्य के

१. इटली का एक महाकवि ऐसा था, जिसे मुर्दा समझकर लोग दफ़नाने लगे, तो वह उठ बैठा और उसके बाद और ३० साल जीवित रहा । वह कवि कौन था?

२. शेक्सपियर की मौत जिस दिन हुई, उसी दिन एक और महान लेखक की भी मौत हुई थी । वह लेखक कौन था?

३. धृतराष्ट्र और गांधारी की क्या कोई बेटी भी थी?

४. वेदमन्त्रों की रचना करनेवाली प्रसिद्ध मुनिपुत्री का नाम क्या है?

५. 'शतक' का क्या अर्थ है?

उत्तर

वह कौन था?

सुकरात (सॉक्रेटीस)

सामान्य ज्ञान

१. गरुड पक्षी-इण्डोनेशिया

२. आलबर्ट आइनस्टाइन

३. इस्राइल

४. यहूदियों का राज्य इस्राइल तभी बना था । आइनस्टाइन भी यहूदी था, इस लिए ।

५. चमकनेवाली धरती ।

साहित्य

१. पेट्रार्क (१३०४-१३७४)

२. 'डॉन क्विक्झोट' का लेखक सर्वेन्टस ।

३. हाँ, दुःशला ।

४. गर्ग मुनि की पुत्री गार्गी ।

५. एक ही विषय की लिखी सौ पद्योंवाली किताब ।

श्रीरामकृष्ण परमहंस

(२)
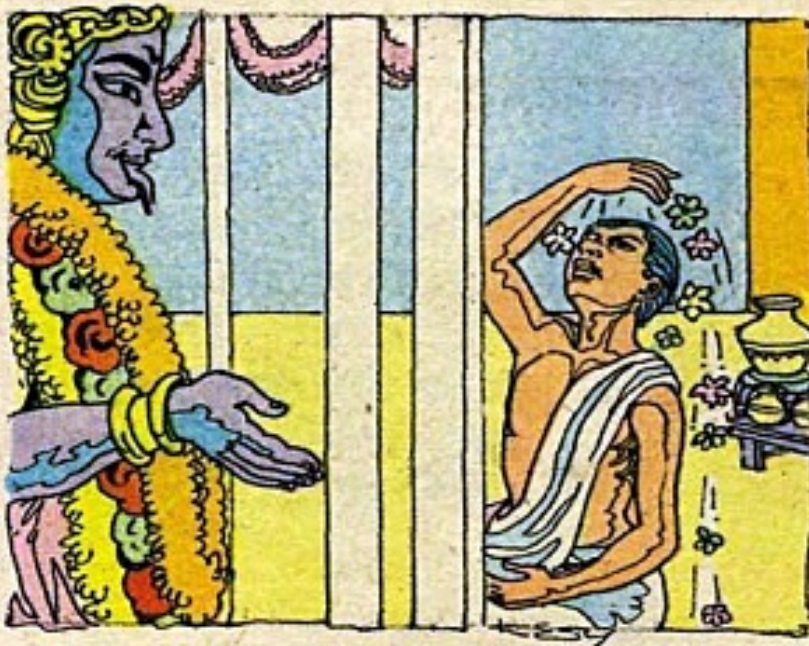
मंदिर में पूजा-पाठ करते समय गदाधर उस में इतना तल्लीन हो जाता था कि सब कुछ भूल जाता था । वह मूर्ति और स्वयं के बीच का भेद भी भूल जाता था और फूल अपने ही सिर पर डाल लेता था ।

आधी रात के समय गदाधर किसी पेड़ के नीचे बैठ जाता, तो घंटों ध्यान में ही लगा रहता । मंदिर के अन्य कर्मचारी उस के इस अजब बर्ताव को देख चकित हो जाते थे ।
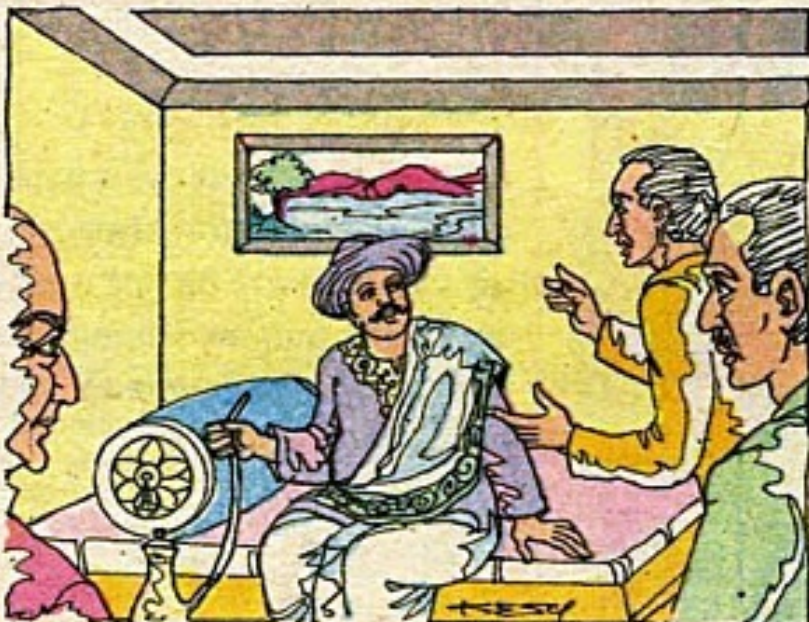
मंदिर के प्रधान पुजारी गदाधर के इस विचित्र व्यवहार के बारे में उन लोगों ने रानी रासमनी के दामाद मधुरानाथ को सूचित किया । इस पर मधुरानाथ ने कहा– "मैं स्वयं इस मामले की जाँच करूँगा ।"

एक दिन मथुरानाथ मंदिर में आया, और उस ने झाँक कर अन्दर देखा । उस समय गदाधर देवी से प्रसाद खाने की प्रार्थना कर रहा था । और सचमुच देवी की मूर्ति को प्रसाद खिला रहा था । गदाधर की भक्ति-परायणता को देख कर मथुरानाथ बड़े संतोष से पीछे मुड़ा ।

एक दिन रानी रासमनी मंदिर में दर्शन के लिए आई और गदाधर के भजन को देर तक सुनती बैठी । अचानक उसे एक मुकद्दमे की याद आई जो अदालत में लटका था । गदाधर ने तुरन्त उसे थप्पड़ मार कर कहा— "यहाँ बैठ कर भी ऐसे तुच्छ विषयों का विचार कर रही हो क्यों?"

गदाधर की इस करतूत पर रानी के सेवक ग़ुस्से में आ कर उसे मारने के लिए आगे बढ़े । पर रानी ने उन्हें रोक दिया । उसे पता चला कि अपने मन के विचारों को जान कर उसे सन्मार्ग पर चलाने की ताक़त मंदिर के पुजारी में है ।

एक अवस्था में गदाधर तरह तरह की विचित्र अनुभूतियों के अधीन होने लगा। अपने भीतर से निकली भूतनी को शिवजी के समान किसी तेजस्वी पुरुष ने पीछे से आकर शूल मे मार दिया। और दूसरे ही क्षण भूतनी अदृश्य हो गई। उस अनुभूति से गदाधर को लगा कि अपने भीतर की सभी गंदगी धुल गई।

गदाधर की माँ अपने पुत्र की शादी रचाना चाहती थी। माँ के रिश्तेदार सुयोग्य वधु को ढूँढ़ने लगे। एक दिन अचानक गदाधर ने कहा– "मेरी पत्नी बननेवाली लड़की जयरामबाटी में रामचन्द्र मुखोपाध्याय के घर में पल रही है।"

वैसे गदाधर कभी जयरामबाटी नहीं गया था। फिर भी उस की बात का विश्वास करके रिश्तेदार वहाँ गये। वहाँ के रामचन्द्र मुखोपाध्याय से मिले। उन की बेटी से गदाधर की शादी तय कर दी गई।
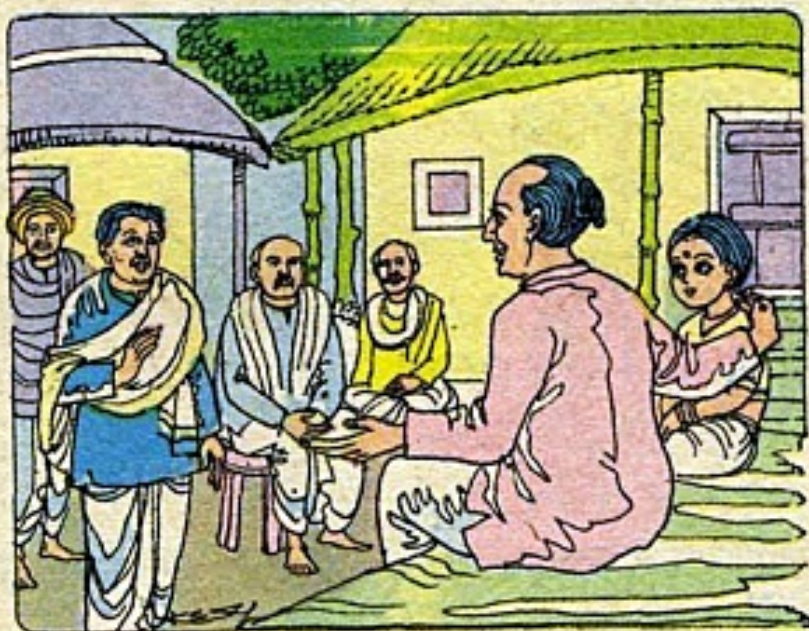
उस लड़की का नाम था शारदामणि। उस के साथ गदाधर का विवाह संपन्न हो गया। विवाह के कार्यक्रमों में गदाधर ने उत्साह के साथ हिस्सा लिया। बालिका शारदामणि रूप-संपन्ना थी। उस के निर्मल नयन सब को बड़े आकर्षक लगे।

शादी के बाद मंदिर लौट कर गदाधर फिर अपने गहरे अध्यात्मिक चिन्तन में लग गया। भक्ति में तल्लीन हो कर परम आनंद की अनुभूति के लिए गदाधर ने आदर्श भक्त हनुमान का गहरा ध्यान करना शुरू किया।

एक दिन गदाधर को एक विचित्र अनुभूति हुई कि कोई सुंदर दैवी स्त्री उसकी तरफ चली आ रही है। थोड़ी देर बाद उस ने पहचान लिया कि वही 'माँ सीता' है। वह आहिस्ता-आहिस्ता गदाधर के पास आई और उस में लीन हो गई। (क्रमशः)

पुण्य की बिक्री

किसी गाँव में एक बहुत ही ग़रीब आदमी रहता था। उस का नाम था शम्भु। उस की पत्नी का नाम था केसरी। इधर दो साल गाँव में अकाल पड़ा था। पेड़-पौधे ठूँठ हो गये थे। मवेशियों के कंकाल मात्र शेष रह गये थे। काम करने की इच्छा होने पर भी लोगों को काम नहीं मिलता था। दो-चार दिन में एकाध बार रूखी-सूखी मिली तो घूँट भर पानी के साथ खा लेते। यों सर्वत्र हाहाकार मचा था। कहीं काम मिलने की गुंजाइश न थी। इस लिए शम्भु को दो वक़्त की रोटी के लाले पडे थे। केसरी ने अपने पति से कहा—"आप शहर जा कर कुछ कमा क्यों नहीं लाते? सुना है, काम करनेवाले शहर में भूखे नहीं मरते! आप शहर जाएँगे तो कहीं न कहीं आप को काम मिल ही जाएगा। कुछ खुद खाइए, कुछ इधर भेज दीजिए।"

शम्भु को बीवी का विचार जँचा, वह केसरी की बात मान गया। शम्भु ने काम के लिए शहर जाने का निश्चय किया। अगले दिन बड़ी सुबह उठ कर केसरी ने पाँच रोटियाँ बनाईं। चार को एक पोटली में बाँध दिया। शम्भु पोटली ले कर शहर जाने को तैयार हुआ। जाते समय शम्भु ने केसरी से कहा—"तुम्हारी इच्छा के अनुसार मैं शहर जा रहा हूँ। अगर भाग्य से कुछ काम मिला तो सारी चिंता दूर हो जाएगी। वरना मैं शीघ्र ही वापस चला आऊँगा। तुम इधर चिंता मत करना।"

शहर बहुत दूर था। एक दिन का रास्ता था, वह भी ऊबड़-खाबड़ और थकानेवाला। इस लिए पड़ोसी शिवानन्द ने अपना मरियल घोड़ा शम्भु को देते हुए कहा-"देखो, मेरा घोड़ा एक महीने बाद लौटा दो तो मुझे परेशानी नहीं होगी, इस पर

शिवदेव मन्हास
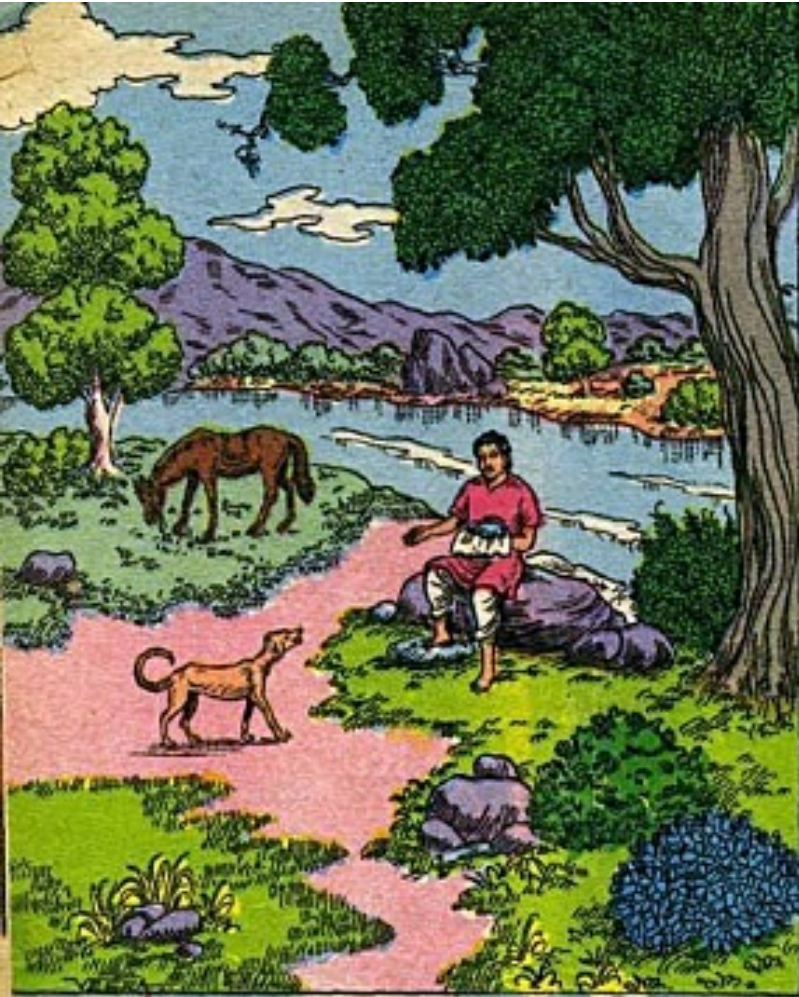
बैठ कर जाओ तो शहर जल्दी पहुँच जाओगे। हाँ जब तुम्हें काम मिल जाएगा तो घोड़े को भी कुछ खिलाना। कम-से-कम रोज़ उसे पानी ज़रूर पिलाना। वह अच्छी तरह ज़िंदा रहे तो तुम्हारी सेवा ही करेगा।"

शिवानन्द के घोड़े पर बैठ कर शम्भु शहर के लिए रवाना हुआ। दोपहर के वक़्त एक नदी के पास पहुँचा। अब उसे भूख लगी थी। शम्भु घोड़े से नीचे उतरा। चारों तरफ़ हरी घास लहरा रही थी, उसने घोड़े को चरने के लिए वहाँ छोड़ दिया। हाथ-मुँह धो कर नदी के किनारे बैठ गया और अपनी रोटियों की पोटली खोल दी।

उसी समय कहीं से एक मरियल कुत्ता वहाँ आ पहुँचा। वह भी भूखा था। शम्भु को उस पर दया आई। टुकड़े कर कर के एक रोटी उस ने कुत्ते को खिला दी। शायद एक रोटी से कुत्ते की भूख नहीं मिटी। वह सिर उठा कर आशा भरी नज़र से शम्भु की ओर देखने लगा।

शम्भु को उस मरियल कुत्ते पर रहम आया। उस ने एक एक कर के बाक़ी तीन रोटियाँ भी कुत्ते को खिला दीं। अब कुत्ते की भूख मिटी। उसे पता भी चला कि अब पोटली में एक भी रोटी नहीं बची। बड़े संतोष के साथ पूँछ हिलाते हुए कुत्ता वहाँ से चल दिया।

नदी का पानी पीकर शम्भु ने जैसे-तैसे अपनी भूख की आग शांत कर ली। फिर घोड़े पर बैठ कर शहर की ओर बढ़ा। दिन ढलते शहर पहुँच गया। उस रात को शम्भु किसी सराय में ठहरा। दिन भर कुछ खाना न मिलने के कारण शम्भु परेशान था। तिस पर काम की चिंता। उसे रात भर नींद न आई। बस करवटें बदलता रहा।

दूसरे दिन सुबह ही शम्भु काम की तलाश में निकल पड़ा। दो-चार गलियों में घूमा-भटका। कई जगहों पर काम पाने की कोशिश उस ने की। काश, उसे कहीं भी काम न मिला। शाम तक इधर-उधर भटकता ही रहा। भूख से पेट जल रहा था, और हाथ में फूटी कौड़ी न थी। शम्भु एकदम निराश हो गया। उसकी समझ में न आया कि अब क्या किया जाए? तब शम्भु ने एक जगह लोगों की भीड़ देखी।

शम्भु भी वहाँ जा पहुँचा । किसी से पूछा कि आखिर बात क्या है? पता चला कि कुबेरनाथ नाम का एक सेठ लोगों से पुण्य खरीद रहा है । अपना पुण्य बेचने आये लोगों की वहाँ भीड़ थी ।

पल भर के लिए शम्भु चकित हुआ । फिर सोचने लगा कि बेचने लायक अपने पास कौनसा पुण्य है । तब उसे याद आया कि अपने पिता ने एक बार गाँव में एक कुआँ खुदवाया था ।

अब शम्भु भी सेठ के पास चला गया । सेठ ने शम्भु को परख कर देखा और कहा-"तुम कौन सा पुण्य बेचने यहाँ आ गए हो?"

अपने पिता के द्वारा खुदवाए कुएँ के बारे में शम्भु ने सेठ से कहा । हँसते हुए कुबेरनाथ ने कहा-"यह पुण्य तुम्हारा नहीं है, तुम्हारे पिता का है । तुम्हारा अपना कोई बेचना हो तो बता दो ।"

शम्भु ने दुख के साथ कहा-"सेठजी, मेरा अपना पुण्य तो मेरे पास कोई नहीं है । ग़रीबी का मारा अभावों में ही अपने दिन काट रहा हूँ । पुण्य करने के काबिल मैं हूँ कहाँ?"

कुबेरनाथ ने कहा-"मेरे पास कोई आता है, तो मैं उस के पुण्य के बारे में जान जाता हूँ । एक दिन तुम ने भूख से तिलमिलानेवाले कुत्ते को चार रोटियाँ खिलाई थीं न? तुम्हारे उस पुण्य में से कुछ बेचना चाहते हो, तो मैं सिर्फ़ एक रोटी का पुण्य ही ख़रीद सकता हूँ!"

शम्भु एक रोटी का पुण्य बेचने के लिए तैयार हुआ । तब अमीर सेठ कुबेरनाथ ने एक रोटी मंगवाई । फिर शम्भु ने सेठ के कहने के मुताबिक रोटी पर हाथ रख कर कहा कि इस में अपनी एक रोटी का पुण्य आ जाए ।
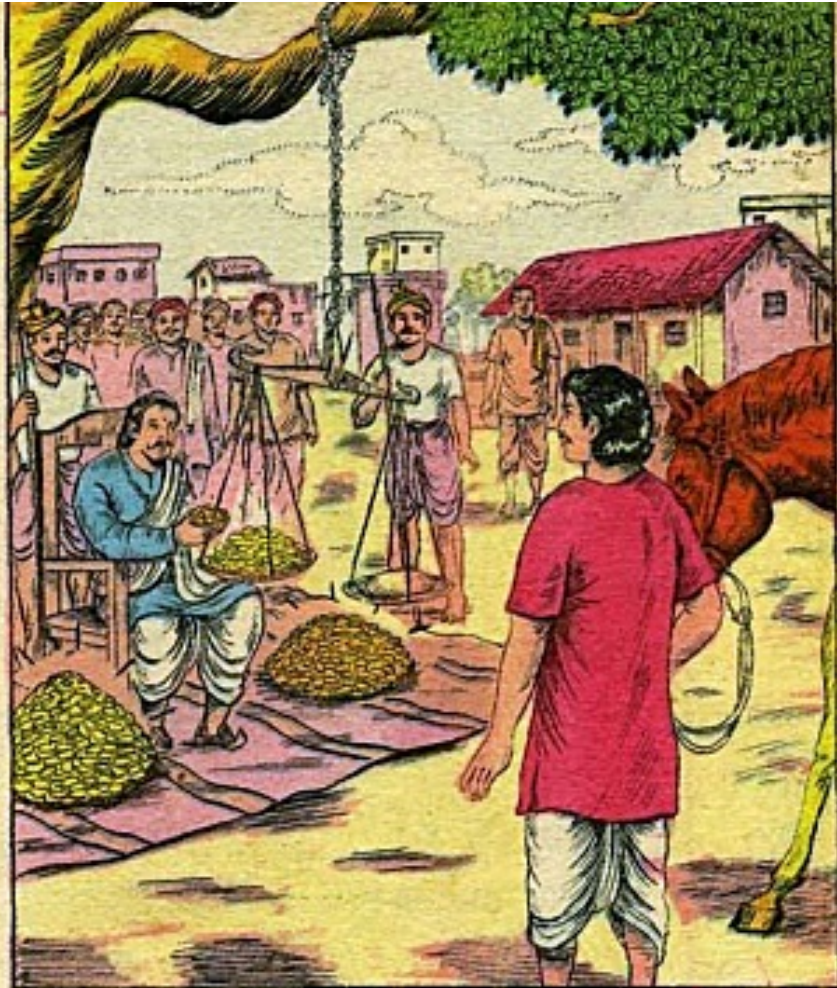
इस के बाद सेठ ने तराज़ू के एक पलड़े में रोटी रख दी । दूसरे पलड़े में सोना, चाँदी, ज़ेवर, हीरे आदि डालने लगा । देखते देखते सेठ की सारी तिजोरी खाली हो गई । अब सेठ ने अपने गले की रत्नमाला और अँगूठियाँ उतार कर पलड़े में डालीं । फिर रोटीवाले पलड़े का भार बराबर हुआ ।

इस तरह एक रोटी का पुण्य बेच कर, शम्भु धन की गठरी के साथ घोड़े पर बैठा, और गाँव की ओर निकला । लेकिन रास्ते के

बीच एक जगह शम्भु का घोड़ा दलदल में फँस गया । धीरे धीरे धँस जाने लगा । बस, लगातार धँसता ही रहा ।

उस तरफ से जानेवाले एक संन्यासी ने शम्भु को देख कर कहा-"क्यों बेकार जान गँवाते हो? यह एक शापग्रस्त दलदल है । अपना कोई पुण्य हो तो उसे यहाँ छोड दो, तभी इस दलदल से घोड़े के साथ बच पाओगे!"

अब शम्भु ने ज़रा भी विलंब नहीं किया । उस ने ज़ोर से कहा-"मैं अपना एक रोटी का पुण्य छोड़ रहा हूँ ।"

इस पर शम्भु के साथ घोड़ा उस दलदलसे थोड़ा ऊपर आया । अब शम्भु ने बची दो रोटियों का पुण्य भी छोड़ दिया । फिर भी घोड़ा घुटनों तक दलदल में फँसा ही रहा । शम्भु की समझ में न आया कि क्या किया जाय?

संन्यासी ने शम्भु से पूछा-"क्या तुम्हारे पास और कोई पुण्य नहीं बचा है?"

"क्यों नहीं? यह गठरी भर सोना भी तो एक रोटी का फल है । मैं इसे भी छोड़ दे रहा हूँ ।" कहते हुए शम्भु ने वह गठरी भी दलदल में फेंक दी ।

दूसरे ही क्षण संन्यासी और दलदल वहाँ से ग़ायब हो गये । आश्चर्य के साथ शम्भु इधर-उधर देखने लगा । तब एक देवी वहाँ प्रत्यक्ष हुई । उसने कहा-"मैं हूँ धर्म की देवी । तुम्हारा दया-भाव प्रशंसनीय है । खुद भूखे रह कर तुम ने एक कुत्ते को चारों रोटियाँ खिला दीं । इतना ही नहीं, तुम में धन का मोह ज़रा भी नहीं है । आगे चल कर तुम हमेशा संपन्न रहोगे । दान-धर्म करते हुए धर्म का पालन करते रहो । यही देख मुझे खुशी होगी ।" कहते हुए देवी अदृश्य हो गई ।

शम्भु ने देखा, घोड़े पर धन की गठरी पूर्ववत् है । संतोष के साथ वह घर वापस आया ।

प्राप्त धन से शम्भु व्यापार करने लगा । दीन-दुखियों की सेवा करते हुए शम्भु ने अच्छा नाम कमाया ।

वीर हनुमान

वाली की मौत हो गयी, ऐसा समझकर सुग्रीव ने गुफ़ा का द्वार एक शिला से बन्द कर दिया और वह राजधानी को लौट पड़ा । लेकिन सच बात यह थी कि मायावी ने वाली को मारा नहीं था, बल्कि वाली ने मायावी को मौत के घाट उतार दिया था । उसके बाद वह सकुशल राजधानी को लौट आया । वाली को जीवित लौटा देखते ही सुग्रीव ने उसे संतोष और गौरव के साथ नमस्कार किया । मगर वाली ने उसे आशीर्वाद नहीं दिया, बल्कि ग़ुस्से से उसे घूरा । फिर उसने सुग्रीव की निन्दा की । सुग्रीव ने अपने सर से ताज उतार कर वाली के पैरों पर रखा और उसे साष्टांग प्रणाम किया ।

सुग्रीव ने समझ लिया कि वाली क्यों खफ़ा है । इसलिए उसे शान्त करने के लिए संयत स्वर में कहा, "भैया, शत्रु का बध करके आप सकुशल लौट आये, यह बड़ी ही संतोष की बात है । इससे और भाग्य की बात क्या हो सकती है ? गुफ़ा के द्वार पर बहुत देर तक आप के कहे मुताबिक मैं इन्तज़ार करता रहा । मगर जब द्वार में से खून बहकर बाहर आया तब वह खून आप का ही समझ कर मैं बहुत दुखी हुआ और गुफा का द्वार शिला से बन्द कर मैं चला आया । मैं राजा बनना नहीं चाहता था, मगर सिंहासन खाली न रखने की बात कहकर मन्त्री और जनता के दबाव डालने पर राजगद्दी पर बैठना मेरे लिये लाज़िमी हो गया । हमारे सौभाग्य से अब आप सकुशल लौटे हैं तो यह आप की अमानत मैं आप को सौंप रहा हूँ, आप ही किष्किन्धा के

सुग्रीव से मित्रता
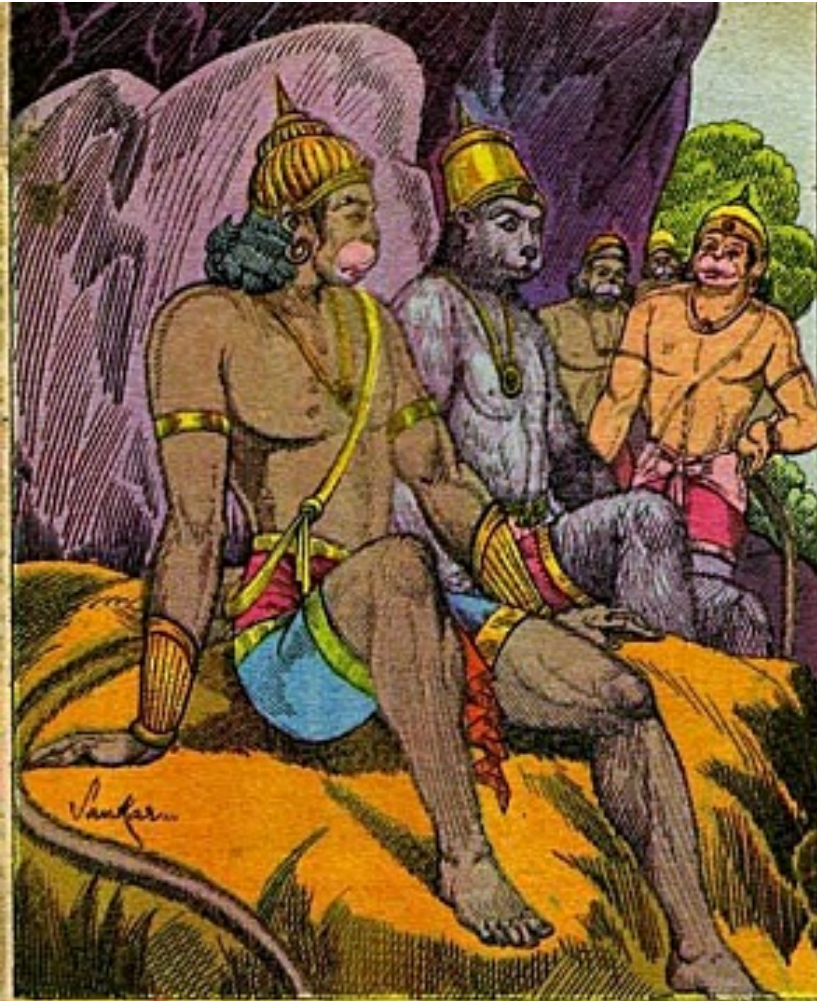
प्रभु हैं। मैं पूर्ववत् युवराजा ही रहना पसन्द करूँगा, राजा बनकर रहने का मुझे बिलकुल शौक नहीं है। मेरे मुकुट धारण करने पर आप कृपया ग़लतफहमी न कीजिए।"

लेकिन सुग्रीव की बातें समझने की वाली ने कोशिश ही नहीं की। अपने ही किये विचारों से वह मानों अँधा हो गया था। सब के सामने उसकी भर्त्सना करते हुए वाली बोलता गया–

"मायावी को खदेड़ते हुए यह सुग्रीव और मैं उसके पीछे भागे। मायावी एक भयानक पहाड़ी गुफ़ा में घुस पड़ा। मैं ने कसम खायी थी, कि मायावी को मारकर ही लौटूँगा। फिर मैं इस से गुफ़ा के द्वार पर ही मेरी प्रतीक्षा करने को कहकर गुफ़ा के भीतर चल पड़ा। गुफ़ा में मायावी शीघ्र मेरी पकड़ में नहीं आया। लम्बी लड़ाई के बाद ही मैं उसका अन्त करने में सफल हुआ। इसके बाद जब मैं लौट पड़ा तो देखता क्या हूँ, कि गुफ़ा का द्वार शिला से बन्द किया हुआ है! मैं ने खूब चीख-चीख कर इस मेरे भाई को पुकारा "सुग्रीव, कहाँ हो तुम?...." लेकिन ये महाशय तो वहाँ से चम्पत हुए थे! इस दुष्ट ने द्वार बन्द कर गुफ़ा में ही मुझे दफ़ना देने की साज़िश की, खुद राजा बन बैठने का सपना देखता रहा! द्वार पर लगी शिला को घूसों व लातों से चूरचूर कर मैं किसी तरह गुफ़ा से बच निकला!"

यह सारा वृत्तान्त वहाँ हाज़िर सभी लोगों को सुनाने के बाद क्रोध से थरथराते हुए वाली ने सुग्रीव को अपने राज्य के बाहर निकाल दिया, और उसकी पत्नी रुमा को अपनी पत्नी बना लिया। वाली के डर से सुग्रीव लाचार होकर ऋष्यमूक पर्वत पर चला गया और वहीं रहने लगा। सुग्रीव के साथ हनुमान, जाम्बवन्त, मैंद और द्विविद नामक वानर उसके मन्त्री बनकर रहने लगे।

सग्रीव के साथ इस तरह रहते हुए ही एक दिन हनुमान का श्रीराम से परिचय हुआ ऋष्यमूक पर्वत पर रहते हुए सुग्रीव ने एक दिन दो मानवों को वहाँ विचरण करते देखा। वे दोनों पम्पा सरोवर के पास स्थित वन में संचार कर रहे थे। दोनों धनुर्धारी थे व देखने में बड़े सुन्दर थे। उन्हें देखकर सुग्रीव डर गया। वाली को एक शाप था, उसके अनुसार वह ऋष्यमूक पर कदम नहीं रख सकता था। उस शाप की कथा यह थी–

दुंदुभी नाम का एक महाबलशाली, महिषरूप धारण किया हुआ एक दैत्य था। वरप्रदान के कारण वहमी होकर और गर्वोन्नत होकर वह समुद्र के पास गया और उसने उसे युद्ध के लिए आह्वान किया। समुद्र ने उससे युद्ध करने की अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए उसे हिमवान् पर्वतराज के पास भेज दिया। तब दुंदुभी ने हिमालय के पास जाकर गर्जना करते हुए उसे युद्ध के लिए आमन्त्रित किया। हिमालय ने कहा कि, "बहुत से ऋषिगण मेरे आश्रय में रहते हैं। हमारे युद्ध से उनके तपाचरण में खलल आ सकती है। और मुझ में इतना बल भी नहीं है, कि मैं तुम्हारा सामना कर सकूँ। युद्ध करने से ही तुम्हें मतलब हो, तो तुम किष्किन्धा का राजा वाली को आव्हान दो। वाली बल और तेज में तुम से भी बढ़कर है।". इसपर क्रोधित हो दुंदुभी सीधे किष्किन्धा चला गया। नगर द्वार पर पहुँच कर अपने सींगों से ज़मीन कुरेदते हुए उसने गरज कर वाली को आह्वान किया।

वह रात का समय था और वाली अपन अन्तःपुर में विश्राम कर रहा था। दुंदुभी के गर्जन से कृद्ध होकर वह नगरद्वार पर पहुँचा। वहाँ उन दोनों का भारी संग्राम हुआ। युद्ध में वाली ही प्रखर रहा। उसने दुंदुभी को उठाकर ज़मीन पर पटक दिया। और दुंदुभी के कान, नाक, भौंह वगैरह सभी द्वारों से रक्तस्राव होकर वह मर गया। इसके बाद वाली ने उसका शरीर उठाकर तेज़ी से दूर फेंक दिया। वह शरीर ऋष्यमूक पर्वत पर बसे मातंग ऋषी के आश्रम पर से गुज़र कर दूर जा गिरा। मगर जाते-जाते उसका खून आश्रम में जहाँ तहाँ गिरे और कुछ छींटे मुनि के शरीर पर भी गिरा। इससे क्रोधित होकर मुनि ने वाली को शाप दिया कि, वाली कभी ऋष्यमूक पर कदम भी रखेगा, तो वह वहीं गिरकर खाक़ हो जाएगा। अब वाली खुद ऋष्यमूक पर नहीं जा सकता था। इस लिए सुग्रीव को लगा कि शायद वाली ने ही उसे मारने के लिये इन दो मानवों को भेजा है। व्याकुल होकर सुग्रीव सोचने लगा कि अब कहाँ जाकर अपना सिर छिपा ले?
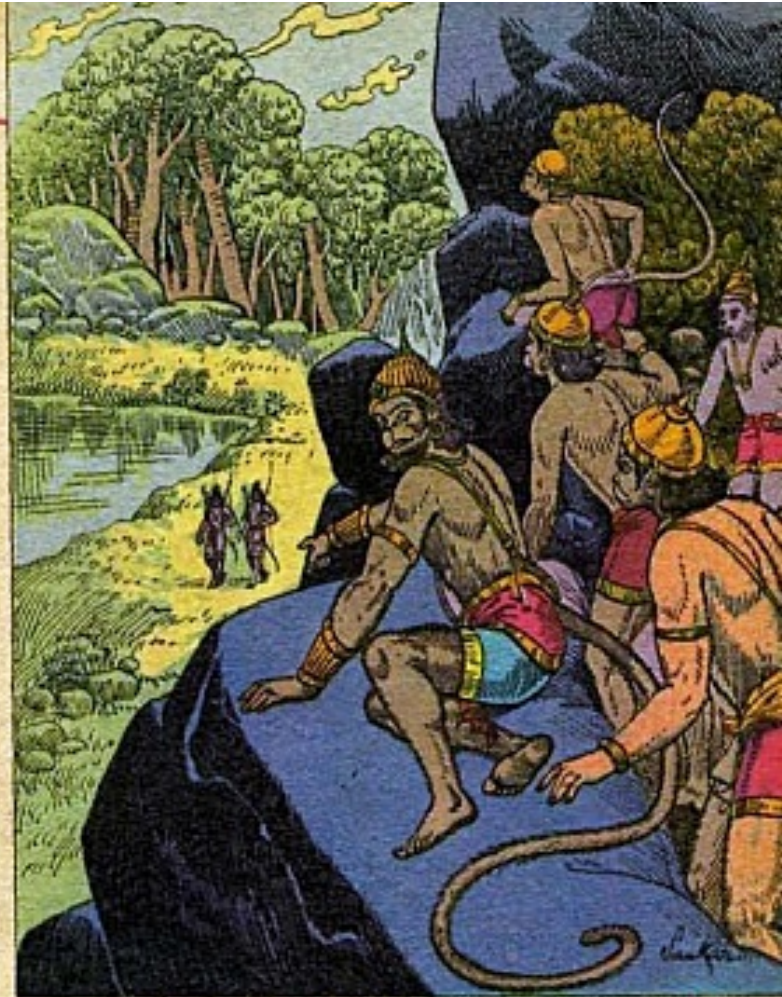
सुग्रीव को डरा हुआ देखकर हनुमान ने पूछा, "वाली तो खुद यहाँ आ नहीं सकता। फिर आप इस तरह परेशान क्यों दिखाई दे रहे हैं, जैसे कि आप ने वाली को ही यहाँ
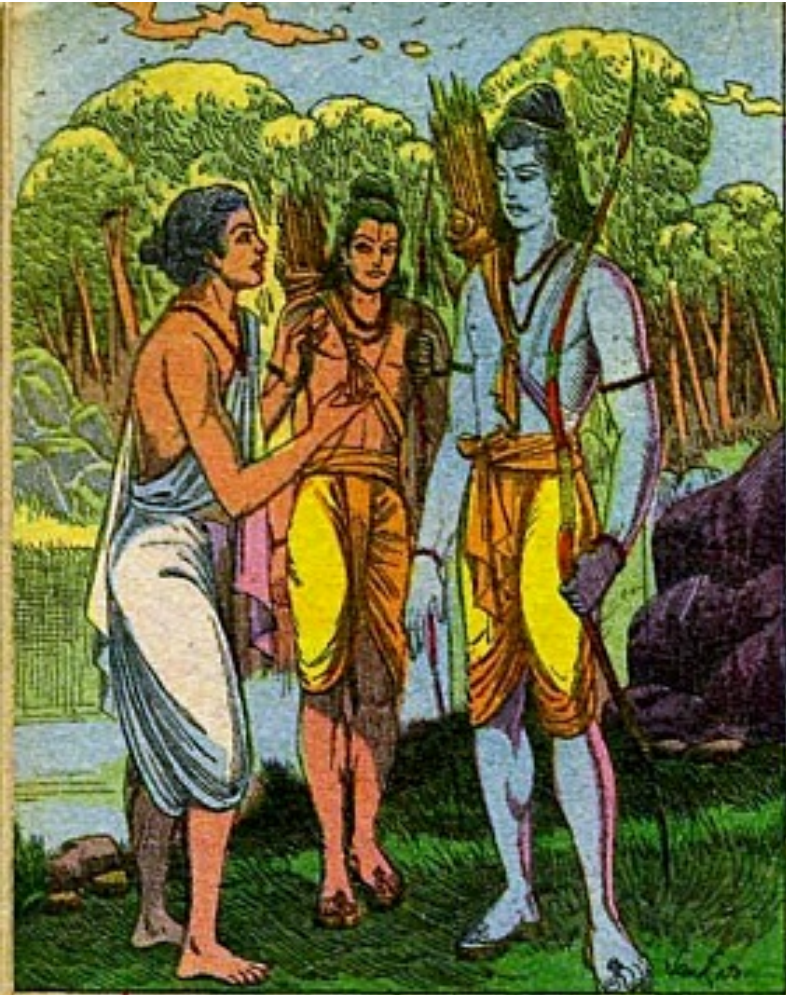
देखा हो?''

''यह बात तो मैं भी जानता हूँ । लेकिन उन दो मानवों को देखो! उनके पास के तीर-कमान और तलवारों को देखो । उन्हें देखकर मुझे लगता है कि शायद वाली ने उन्हें मेरा अन्त करने के लिए भेजा है । राजा के अनेक सहायक होते हैं । हमें गुप्तचरों से भी हमेशा सावधान रहना चाहिये । शत्रु का अन्त करने के लिए राजा-महाराजा अनेक प्रकार से षड्यन्त्र रचते रहते हैं । बुद्धि में भी वाली बड़ा महान् है । इसलिए, सुनो हनुमान, तुम उन मानवों की हरक़तों पर बारीकी से नज़र रखो । उनकी बातें सुनो । परख लो कि वे मित्र हैं, या शत्रु । हथियारबन्द होकर वे इस तरह जंगलों में क्यों भटक रहे हैं, यह तुम उनसे पूछो । यदि उन्हें मेरे बारे में कोई ग़लतफ़हमी हो, तो उसे मिटाकर मेरे बारे में उनके मन में सही भावना लाने की कोशिश करो ।'' सुग्रीव ने कहा ।

सुग्रीव की बात पर राम लक्ष्मण से मिलनेके लिए हनुमान उन के पास गया । हनुमान ने एक ब्रम्हचारी का रूप धारण किया और राम लक्ष्मण के पास पहुँच कर नम्रता के साथ कहा – ''महाशय, आप दोनों राजर्षियों, देवताओं या तपोधनों की तरह दिखाई दे रहे हैं । आप महानुभाव कौन हैं? इस पंपा के तट पर आप को क्यों आना पड़ा? आप को देख कर वन्य मृग डर रहे हैं । आप के हाथी की सूँडों जैसे हाथ और सुविशाल भुजाओं को देखने पर लगता है कि आप राज करनेवाले क्षत्रिय हैं ।''

राम लक्ष्मण ने इस का कोई उत्तर नहीं दिया । फिर हनुमान ने उन से कहा – ''सुग्रीव नामक वानर राजा धर्मात्मा है, वह महान् बलशाली भी है । भाई ने उसे राज से निकाल दिया, इस लिए आजकल वह तकलीफ़ें झेल रहा है । मैं हूँ उन का मंत्री । मेरा नाम हनुमान है । सुग्रीव की आज्ञा पर ऋष्यमूक पर्वत से मैं आप से मिलने चला आया । मैं कामरूपी हूँ, इस लिए ब्रम्हचारी का वेश धर कर आप के पास आया हूँ । मैं इच्छागामी हूँ । सुग्रीव आप से मित्रता करना चाहता है ।''

ये सब बातें सुन कर राम को बड़ा संतोष हुआ । इस के पहले कबंध ने राम से कहा था

कि रावण के चंगुल से सीता को छुड़ाने के लिए उस को वानर राजा सुग्रीव के साथ दोस्ती कर लेनी चाहिए ।

राम ने लक्ष्मण से कहा– "लक्ष्मण, यह तो हमारा बड़ा सौभाग्य है कि हम जिसे ढूँढ़ रहे हैं, वही हमारे पास आना चाहता है । यह बड़ा ही भलामानस लगता है । यह निष्कपट और निर्मल अंतःकरणवाला दिखाई देता है । तुम इस से बात करोगे?"

तब लक्ष्मण ने हनुमान से कहा– "सुग्रीव के सद्‌गुणों के बारे में हम ने सुना है । वास्तव में हम उसी को ढूँढ़ते हुए यहाँ चले आये । तुम्हारी इच्छा के अनुसार हम सुग्रीव से मित्रता करने के लिए तैयार हैं ।"

हनुमान यह सोच कर खुश हुआ कि राम को सुग्रीव से कोई काम पड़ा होगा, इस लिए सुग्रीव को अपना राज्य वापस पाने के लिए राम सहायक सिद्ध होगा । फिर हनुमान ने राम-लक्ष्मण से पूछा– "महात्मन्, क्या मैं जान सकता हूँ कि आप दोनों को इस भयानक दंडकारण्य में क्यों आना पड़ा?"

तब राम ने लक्ष्मण को अपनी कहानी बताने की अनुमति दी । लक्ष्मण ने निवेदन शुरू किया–

"महाराज दशरथ का बड़ा पुत्र यह है राम । यह राजा बनने योग्य है । अपने पिता द्वारा दिया वचन पालने के लिए राज्य छोड़ कर यों वनवासी बन गया है । मैं उस का छोटा भाई हूँ लक्ष्मण । हमारे साथ इस की पत्नी और मेरी भाभी सीता माता भी वनवास के लिए आई थी । हम जब आश्रम से दूर थे, तब किसी राक्षस ने इस की पत्नी का अपहरण किया । हम नहीं जानते कि वह राक्षस कौन है । किसी और राक्षस ने हमें बताया कि उस राक्षस का पता हमें सुग्रीव के द्वारा मालूम हो सकता है । मैं ने अपना सारा समाचार तुम्हें बता दिया । महान् से महान् व्यक्ति को भी शरण देने योग्य यह महापुरुष अब सुग्रीव से मित्रता करना चाहता है । बड़े भाग्य की बात है कि सुग्रीव यही चाहता है ।"
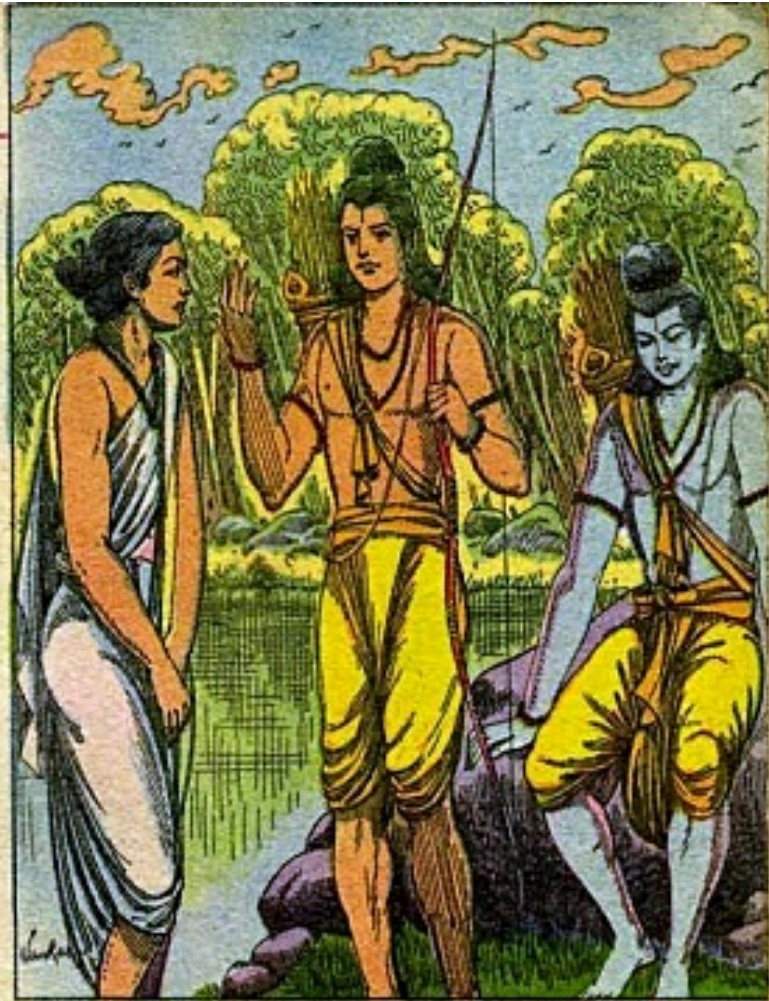
इस पर हनुमान ने कहा– "वास्तव में राजा सुग्रीव को ही आप को ढूँढ़ते हुए आना चाहिए था । वाली ने उसके राज्य और पत्नी का अपहरण किया है, इस लिए राजा सुग्रीव बड़ा ही दुखी है । सीताजी को ढूँढ़ने में वह

ज़रूर आप की सहायता करेगा ।"फिर हनुमान ने उन्हें सुग्रीव के पास आने का निमंत्रण दिया ।

तब राम ने लक्ष्मण से कहा– "चलो, हम सुग्रीव के पास जाएँगे । उस की सहायता से हमारा काम बनेगा ।"

यह सुनते ही हनुमान ने अपना असली वानर रूप धारण कर लिया । राम और लक्ष्मण को अपनी भुजाओं पर बिठा कर ऋष्यमूक पर्वत की ओर चला । मगर सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर नहीं था । डर कर वह समीप के मलय पर्वत पर जा छिपा था ।

मलय पर्वत पर छिपे सुग्रीव से मिल कर हनुमान ने कहा ।– "ये अतिथि राम और लक्ष्मण हैं । इक्ष्वाकु वंश में पैदा हुए । राजा दशरथ के ये पुत्र हैं । पिता की आज्ञा से राम वनवास के लिए आए । कोई राक्षस उस की पत्नी को उठाकर भागा । इस लिए राम तुम से सहायता माँगने के लिए-तुम्हें ढूँढ़ता हुआ यहाँ आ पहुँचा है । दोनों भाई राम और लक्ष्मण तुम्हारी मित्रता चाहते हैं ।उन्हें मित्र बना लो, उन का आतिथ्य करो ।"

यह सब सुन कर सुग्रीव बहुत ही खुश हुआ । सुंदर मानव-रूप धारण कर वह राम-लक्ष्मण के पास आया और कहा– "तुम्हारे बारे में हनुमान ने मुझे सब कुछ बता दिया है । हे राजा राम, मुझ जैसे वानर के लिए तुम से मित्रता करना अत्यन्त संतोष की बात है । मेरे लिए उस में लाभ ही लाभ है । अगर मुझ से मित्रता चाहते हो तो तुम्हारा हाथ मेरे हाथ में डालो और मित्र - धर्म की पूर्ति करो ।"

सुग्रीव ने राम के हाथ में हाथ डाला । राम ने सुग्रीव को आलिंगन किया । तब हनुमान ने आरणि का मथन करके अग्नि पैदा की, और उस की पूजा की । फिर उसे राम और सुग्रीव के बीच में रख दिया । राम और सुग्रीव ने उस अग्नि की प्रदक्षिणा की और अग्नि को साक्षी बना कर उन दोनों ने मित्रता कर ली ।

राम ने सुग्रीव से कहा– "अब तुम मेरे मित्र बन चुके हो । इस क्षण से तुम्हारा सुख मेरा सुख है, और तुम्हारा दुख मेरा दुख है ।"

सुग्रीव ने मुलायम पत्तोंवाली साल वृक्ष की एक शाखा तोड़ी और राम के साथ उस पर बैठ गया । लक्ष्मण के बैठने के लिए हनुमान
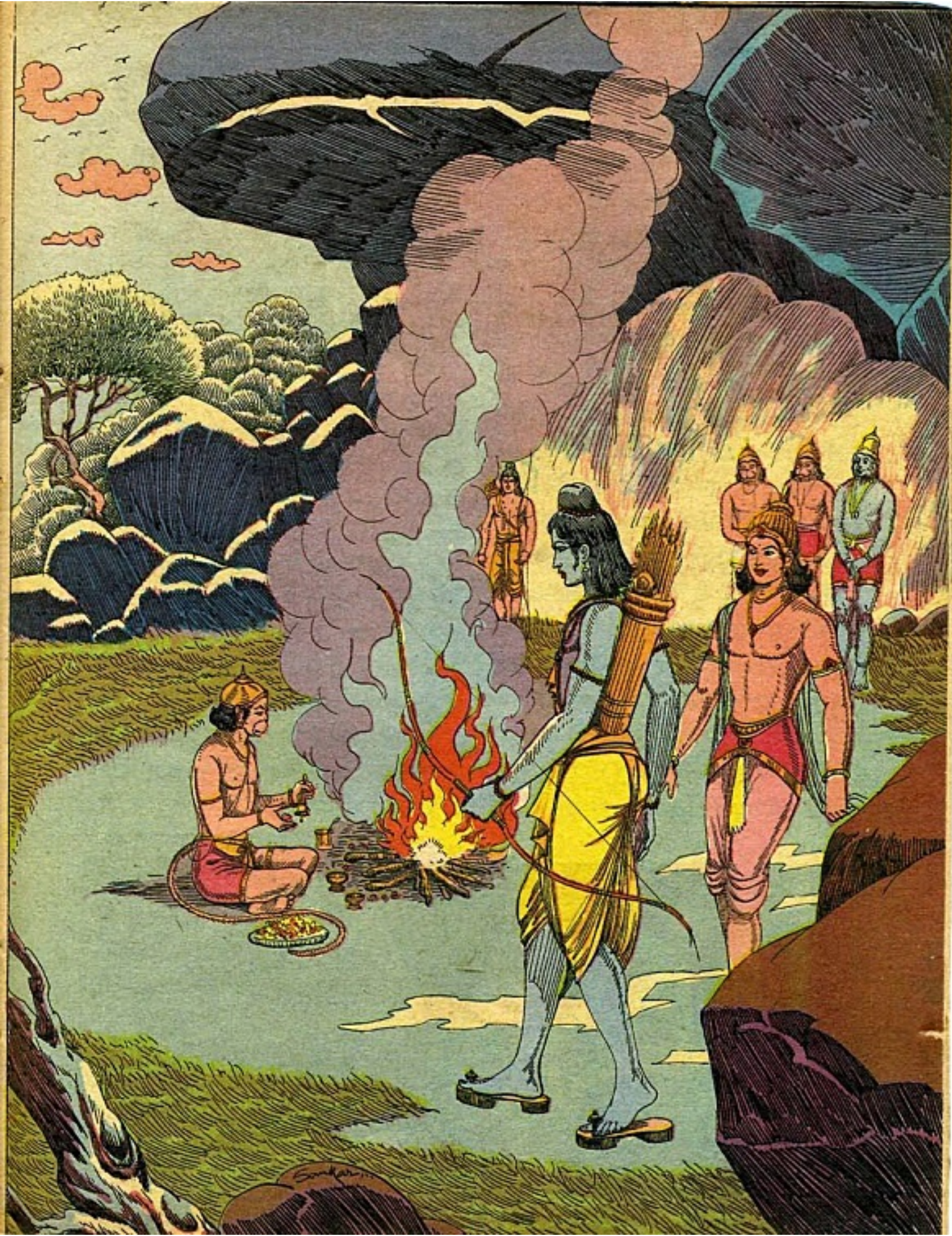
ने चन्दन वृक्ष की एक शाखा तोड़ ली ।

सुग्रीव ने राम को विस्तार से बताया कि उस के और वाली के बीच कैसे शत्रुता पैदा हुई । उस ने राम से प्रार्थना की– "मित्र, वाली के डर से मैं बहुत व्याकुल हो गया हूँ । मुझे इस डर से बचाओ ।"

वाली और सुग्रीव की कहानी सुन कर मुस्कराते हुए राम ने कहा– "मित्रता का फल होता है उपकार । तुम्हारी पत्नी का अपहरण करनेवाले वाली का मैं वध कर डालूँगा ।"

इस बात को सुन कर सुग्रीव बहुत खुश हुआ । उस ने राम से कहा– "हे राम! मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी कृपा से मुझे अपना राज्य और मेरी पत्नी वापस मिल जाए । इस के लिए तुम्हें वाली का वध ही करना होगा । मैं सीता देवी को ढूँढ़ कर लाऊँगा और तुम्हें सौंपूँगा । वह चाहे पाताल में हो या स्वर्ग में, मैं उसे ज़रूर ढूँढ़ लूँगा । अब मुझे याद आ रहा है, मैं ने ज़रूर सीता देवी को देखा है । मुझे और मेरे वानरवीरों को देख कर उस ने हमारे सामने गहनों की गठरी गिरा दी थी । उन गहनों को मैं ने सँभाल कर रखा है । शायद उन गहनों को तुम पहचान पाओगे, देख लो ।"

सुग्रीव ने गुफा में जा कर, एक कपड़े में बंधी गहनों की गठरी ला कर राम के सामने रख दी । उस कपड़े को देखते ही राम ने पहचान लिया कि वह सीता की ही ओढ़नी है ।

इस पर राम "हे सीता!" कह कर बेहोश-सा हो गया । थोड़ी देर बाद उस ने लक्ष्मण से कहा– "लक्ष्मण, राक्षस से अपहृत हो कर जाते समय सीता ने इस गहनोंवाली गठरी को इस हरियाली पर गिरा दिया होगा, इसी लिए ये गहने ज़रा भी बिगड़े नही हैं ।"

लक्ष्मण ने राम से कहा– "भैया, केयूर और कुंडलों को तो मैं पहचान नहीं सकता । मगर माँ सीता के पैरों पर मैं रोज़ नमस्कार किया करता था, इस लिए मैं इन पायलों को अच्छी तरह पहचानता हूँ ।"

राम ने सुग्रीव से दीन स्वर में पूछा– "तुम ने तो देख ही लिया होगा, वह राक्षस सीता को किस तरफ ले गया?"

अदृश्य करणी

किसी गाँव में एक दुष्ट ज़मींदार रहता था । भिखमंगों को वह अपने घर के आसपास फटकने नहीं देता था । अगर कोई लाचार भिखमँगा उस के घर तक पहुँच ही जाता तो भद्दी गालियाँ दे कर भगा देता था ।

एक बार उस इलाक़े में भारी अकाल पड़ा । उस गाँव के लोगों ने ऐसा अकाल पहले कभी नहीं देखा था । रोज़ाना भूख से लोग मरने लगे । एक जून पेट भर खाना लोगों को मुश्किल-सा हो गया । लोग जानते थे कि ज़मींदार के पास काफ़ी अनाज है । लोगों ने उस के पास जा कर बहुत मिन्नतें कीं, पर उस संगदिल का दिल नहीं पसीजा ।

इस हालत में एक नौजवान आगे आया और उस ने ज़मीनदार से अनाज लाने का वादा किया । उस ज़मींदार के बगीचे के पास जा कर एक बड़े पेड़ के नीचे खड़ा हुआ, और उस पेड़ के घने पत्तों की ओर देखने लगा ।

जमींदार पेट भर खाना खा चुका था, खिड़की के पास खड़े हो बाहर देखने लगा । उस नौजवान को उस ने देख लिया । ज़मींदार को उस नौजवान पर शक हुआ । उस ने ज़ोर से चिल्ला कर पूछा– "कौन है वहाँ? मेरी बगिया में क्या कर रहे हो?"

नौजवान ने ज़मींदार के चिल्लाने की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया ।

ज़मींदार घर के भीतर से बाहर बगीचे में चला आया और उस नौजवान से पूछा– "ऊँचा सुनते हो क्या? मैं पूछ रहा हूँ कि तुम्हारा यहाँ क्या काम है? क्यों खड़े हो यहाँ?"

"कुछ नहीं, एक घोंसला यहाँ ढूँढ़ रहा हूँ । कल मैं ने इस पेड़ पर एक अग्निपक्षी को बैठते हुए देखा था । अगर इस पेड़ पर उस का घोंसला हो, तो उस में ज़रूर वह जादू की बूटी होगी, आप को भी यह मालूम ही होगा! वाह,

चीन की लोककथा

वह रहा वहाँ घोंसला!" नौजवान ने आश्चर्य से कहा ।

"जादू की बूटी? वह कैसी होती है? मैं तो कुछ नहीं जानता!" ज़मीनदार ने कहा ।

नौजवान ने कहा– "वह एक अपूर्व जड़ी है । हज़ारों साल में एक बार फूल आता है उस में और हज़ार साल बाद उस का फल होता है! उस के छोटे-से डंठल में भी अद्भुत शक्ति होती है ।"

"अद्भुत शक्ति? कैसी अद्भुत शक्ति भला?" ज़मींदार ने पूछा ।

"पहली अद्भुत शक्ति है– उस डंठल को अपने सर के बालों में रखें, तो हम अदृश्य हो जाते हैं । फिर हमें कोई देख नहीं पाता । तब हम मन में जो आए, कर सकते हैं । और दूसरी शक्ति–"

नौजवान कुछ बोलने जा रहा था, कि ज़मींदार ने उसे डाँटते हुए कहा– "जाओ, तुम पहले यहाँ से चले जाओ ।"

नौजवान ने अपने चारों ओर देखा और पूछा– "यहाँ तो कोई नहीं है । आप किस को डाँट रहे हैं?"

ज़मींदार ने उसी तरह चिल्लाते हुए कर्कश स्वर में कहा– "मैं तुम्हें ही जाने के लिए कह रहा हूँ । यह बगीचा मेरा है, इस लिए वह अदृश्यकरणी मूली भी मेरी ही है ।"

"यह बात है तो! मैं ने जैसे उस का पता लगाया, वैसे मैं उस को नष्ट करना भी जानता हूँ ।" कहते हुए नौजवान पेड़ पर चढ़ने लगा ।

ज़मीनदार ने कहा– "रुको, मेरी बात सुनो । मैं तुम्हें पचास अशर्फियाँ दूँगा । तुम

यहाँ से चले जाओ ।"

"इतनी अद्भुत मूली मैं तुम्हें इतने सस्ते में क्यों बेचूँ?" नौजवान ने पूछा ।

अब ज़मींदार सौदे पर उतर आया!

नौजवान ने कहा– "मुझे धन की ज़रूरत नहीं है । अनाज के पचास बोरे दें तो मैं यह अद्भुत बूटी आप के लिए छोड़ जाऊँगा ।"

लाचार हो कर ज़मींदार ने मान लिया । पचास बोरे अनाज ले कर नौजवान चला गया । गाँव के ग़रीबों में उस ने अनाज बाँट दिया ।

जमींदार ने अपने नौकरों को बुला कर पेड़ से वह घोंसला उतरवा लिया । फिर उसे ले कर ज़मींदार अपनी बीवी के पास गया और मारे ख़ुशी के पूछा– "जानती हो क्या हुआ?"

बीवी ने पूछा– "मुझे कैसे मालूम होगा भला? किसी का सर मूँड़ कर आए हो क्या?"

"तुम कैसे जान पाओगी? यह एक जादू की बूटी मैं ने हथिया ली है! इस की सहायता से मैं बहुत पैसा कमा लूँगा ।" ज़मींदार ने कहा ।

घोंसले की तरफ आश्चर्य से देखते हुए पत्नी ने पूछा– "यही है क्या वह जादू की बूटी?" उसे घोंसले में घास-फूस और सूखे डंठलों के सिवा कुछ नहीं नज़र आया ।

"इन्हीं में जादू की बूटी है । उसे ढूँढ़ निकालना हमारा काम है ।" ज़मींदार ने कहा ।

ज़मींदार एक एक डंठल उठा कर अपने सर पर रखता और पूछता गया– "क्या मैं दिखाई दे रहा हूँ?" उस की पत्नी कहती–

"हाँ, बहुत अच्छी तरह दिखाई दे रहे हो ।" ज़मींदार अपना सवाल दोहराता रहा, एक एक डंठल अपने सिर पर रखता रहा ।

पति के इस सवाल से ज़मींदार की पत्नी ऊब गई । झल्ला कर बोली—"कुछ नहीं दिखाई देता, अब चले जाओ ।" उस के कहने का मतलब था, जादू-टोना कुछ नहीं दिखाई देता । मूर्ख ज़मींदार ने सोचा कि अपने सर पर रखा डंठल ही जादू की बूटी है और उसी की वजह से वह अदृश्य हो चुका है । उसे अपने बालों में छिपा कर, अपने को अदृश्य मानते हुए ज़मींदार बाहर निकला ।

एक जगह उसे गरम-गरम कचौड़ियों की खुशबू आई । पास में जलेबीवाला जलेबियाँ तल रहा था । देखने में बड़ी खूबसूरत लग रही थीं जिलेबियाँ । पहले उस ने पाव किलो जिलेबियाँ पेट में उतारीं । और फिर दो कचौड़ियाँ ले कर उस ने खा लीं और पैसे दिये बिना चल दिया । दूकानदार ने कुछ नहीं कहा । उस ने सोचा कि ज़मींदार है, आज नहीं तो कल देगा ।

"अदृश्य रह कर दिखाई नहीं पड़ा— इस लिए कचौड़ीवाले ने पैसे नहीं माँगे ।यों सोच कर ज़मींदार खुश हुआ । अब उस का धैर्य दुगुना बढ़ गया । उस ने सोचा, चलो कुछ और चमत्कार कर के देख ले । मज़ा आएगा ।"

एक और दूकानदार दूकान बंद करने जा रहा था । उस दिन के व्यापार के रुपये-पैसे आगे रख कर, चुन-चुन कर गिनने में वह लगा हुआ था । रुपयों का ढेर देख कर ज़मींदार का लालच और बढ़ गया । उसे अपनी आँखों के सामने वही रुपया-पैसा दिखाई दे रहा था । ज़मींदार ने वहाँ जा कर, दोनों हाथों से वह धन हड़पने की कोशिश की । क्यों कि वह अपने को अदृश्य समझ रहा था ।

तुरन्त उस दूकानदार ने ज़मींदार का हाथ कस कर पकड़ा और चिल्ला उठा— "चोर! चोर!! पकड़ो! पकड़ो!!" आसपास की दूकानों से लोग आए और उन्हों ने ज़मींदार की अच्छी पिटाई की । खूब मार खा कर ज़मींदार गिरते-उठते किसी तरह अपने घर आ पहुँचा ।

नेत्रदर्शी

किसी गाँव में एक दुष्ट ज़मींदार रहता था। भिखमंगों को वह अपने घर के रूप, वेश व बोलने का ढंग सब आकर्षक था। उस ने गाँववालों से कहा– "मैं बहुत साल हिमालयों में रहा, वहाँ के सिद्धपुरुषों से मैं ने एक नई चिकित्सा-विधि जान ली है। अगर आप किसी पुराने रोग से पीडित हैं, तो मेरी दवाओं को आजमाइए।

"इस चिकित्सा-पद्धति में रोगियों को किसी प्रकार से जाँचने की ज़रूरत नहीं होती। सिर्फ थोड़ी देर तक रोगी की आँखों में देखना-बस, यही एक परीक्षा है। इस से मरीज़ की बीमारी का पता चल जाता है। फिर निदान के अनुसार मैं दवा दे देता हूँ।" अब इसे नेत्रदर्शी का भाग्य कहें या रोगियों का, उस के पास आनेवाले अनेक रोगियों के रोग निर्मूल हो गये। इस लिए कुछ ही दिनों में नेत्रदर्शी का नाम आसपास के इलाक़े में मशहूर हो गया। दूर दूर के गाँवों से रोगी आते और नेत्रदर्शी की लंबी फीस दे कर दवा ले जाते। सभी नेत्रदर्शी को महान् वैद्य समझ कर उस की तारीफ़ के पुल बाँधने लगे।

उसी गाँव में एक और वैद्य रहता था-सत्यधर्म। पीढ़ियों से वैद्य का पेशा करनेवाले परिवार में वह पैदा हुआ था। बचपन से ही उस ने अपने दादा व पिता से चिकित्सा संबंधी अनेक बारीक बातें सीख लीं थीं। जब से नेत्रदर्शी उस गाँव में आया, तब से सत्यधर्म के पास आनेवाले मरीज़ों की संख्या काफ़ी गिर गई। सत्यधर्म को अपनी आमदनी कम होने का दुख नहीं था। पर नेत्रदर्शी की चिकित्सा-पद्धति के बारे में उस के मन में ज़बरदस्त शंका आती रही।

रोगी की नब्ज़ देख कर, अनेक शरीरिक परीक्षाएँ कर सत्यधर्म रोग का निदान करता। रोग-निर्णय का यही परंपरागत

जी.सी. जीवी

तरीक़ा है । आँखों में देख कर रोग का पता लगाना कैसे संभव है? इस के बारे में उस ने बहुत कुछ सोचा, पर उस की समझ में कुछ नहीं आया । उस ने अपना संदेह गाँव के एक-दो बुज़ुर्गों पर प्रकट किया ।

सत्यधर्म की बातें सुन कर बुज़ुर्गों ने नेत्रदर्शी से बात की । उस ने कहा— "गाँव का पुराना वैद्य कुएँ का मेंढ़क है । कभी गाँव छोड़ कर बाहर जो नहीं गया । पुराने ग्रंथों को कंठस्थ कर जो थोड़ा चिकित्सा-विज्ञान जान लिया है, उस से वह अपने को बड़ा वैद्य समझता है । मेरी बात ऐसी नहीं है । मैं बचपन में ही हिमालयों में चला गया, वहाँ के सिद्ध पुरुषों की सेवा की, तब प्रतिफल में यह चिकित्सा-विधि सीख पाया । मैं ने जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह मेरे साथ समाप्त नहीं होना चाहिए । इस लिए किसी सुयोग्य शिष्य को ढूँढ़ कर मैं यह विद्या उसे सिखा दूँगा । अगर सत्यधर्म मेरी विद्या सीखना चाहे तो सीख सकता है । भेजेंगे उसे?"

कुछ दिन और बीत गये । एक वैद्य के नाते नेत्रदर्शी की योग्यता के बारे में सत्यधर्म के मन में जो संदेह था, वह बढ़ता ही रहा । नेत्रदर्शी की ईमानदारी और चिकित्सा-शास्त्र का उस का ज्ञान अच्छी तरह परखने का कोई उपाय सत्यधर्म ढूँढ़ता रहा ।

एक रात सत्यधर्म ने अपना वेश बदला और एक बूढ़े को साथ लिये वह नेत्रदर्शी के घर पहुँचा । उस का दरवाज़ा खटखटाया । नेत्रदर्शी ने तुरन्त ही दरवाज़ा खोल दिया ।

सत्यधर्म ने नेत्रदर्शी से निवेदन किया— "महाशय, यह मेरा बूढ़ा चाचा है । अब तक तो काफ़ी स्वस्थ था, अपने सभी काम खुद कर लेता था । मगर न जाने क्या हुआ, एक सप्ताह से न खाना खा रहा है, न पानी पी रहा है । ज़बरदस्ती दूध पिलाते हैं, तो क़ै कर देता है । न चलता-फिरता है, न बात करता है । अगर आप इस की जाँच-परख कर अच्छी दवा दें और इसे भला-चंगा कर दें तो मैं आप को ख़ासा पुरस्कार दूँगा ।"

सब कुछ सुन कर मुस्कराते हुए नेत्रदर्शी ने कहा— "मेरे पास आनेवाले मरीज़ को मैं उस की तकलीफ़ के बारे में पूछता ही नहीं ।

चाचा के साथ आ कर आप ने रोग के बारे में कुछ ज़्यादा ही कह दिया है । मेरी चिकित्सा है 'नेत्र-चिकित्सा' और मैं हूँ नेत्रदर्शी चिकित्सक । हिमालयों पर सर्दी में बुरी तरह काँपते हुए मैं ने अनेक सिद्ध पुरुषों से यह चिकित्सा सीखी है । ज़्यादा कुछ मत कहो, रोगी को चटाई पर लिटा दो ।"

सत्यधर्म ने वृद्ध को चटाई पर लिटा दिया । नेत्रदर्शी ने थोड़ी देर वृद्ध की आँखों में देखा और कहा – "आप के चाचा का जीर्ण कोश कमज़ोर हो गया है । दिमाग़ की नसें भी फट गई हैं । इसी लिए खाना हज़म नहीं होता । और न बोलता-चालता है, यह भी इसी लिए । मैं मामूली सी बनमूलियों को दवाएँ नहीं देता, उत्तरी हिमालय में मिलनेवाली जड़ीबूटियों से बनी विशेष दवाएँ देता हूँ । इस से आप के चाचा बहुत जल्दी स्वस्थ हो जाएँगे और शीघ्र ही बोलना-चालना शुरू करेंगे ।"

यह सब सुन कर बूढ़ा झट चटाई पर उठ बैठा और कहा – "अब मैं बोल-चाल रहा हूँ । कमाल ही है तुम्हारी अद्भुत नेत्र-चिकित्सा! मैं वैसे तो जन्मांध हूँ । मेरी आँखों में देख कर जाने किन रोगों का निदान तुम ने कर लिया है । तुम इतना भी नहीं जान पाए कि मैं अंधा हूँ । कैसे वैद्यराज हो तुम! यह धोखा देने का व्रत कब से स्वीकार कर लिया तुम ने? वाह रे वाह, कमाल है तुम्हारी नेत्र-चिकित्सा!"

इन बातों पर नेत्रदर्शी घबरा गया, तो सत्यधर्म ने कहा – "अजी, मैं ही इस गाँव का वैद्य हूँ । मेरा नाम है सत्यधर्म । यह तो आपका भाग्य है या रोगियों का पुण्य कि आज तक आप की धोखा-धड़ीवाली चिकित्सा में किसी की जान नहीं चली गई । जीने की अनेक राहें हैं, कोई एक चुन लीजिए । ईमानदारी से जीने की कोशिश कीजिए । धोखा-दगावाली अपनी चिकित्सा से रोगियों की जान से मत खेलिए ।"

नेत्रदर्शी ने अपनी भूल जान ली और सत्यधर्म से क्षमा माँगी । नेत्रदर्शी उसी दिन वह गाँव छोड़ कर चलता बना ।

अतिविनय

सर्वोत्तम सुशील देश का राजा था। एक बार उसे संदेह हुआ कि अपने ही लोगों में कोई शत्रु के गुप्तचर हैं। इस का एक ख़ास कारण भी था। पड़ोसी राजा निद्राप्रिय को अंत:पुर के अनेक रहस्य तुरन्त मालूम होते जा रहे थे, इसी लिए सर्वोत्तम को यह शक हुआ था। शत्रु को अपने राज्य के रहस्यों का पता लगना धोखे की निशानी है। ऐसा कभी नहीं होना चाहिए। अगर होता है, तो तुरंत उस का उपाय करना चाहिए। सर्वोत्तम के मन में कुछ घबराहट भी हुई। वैसे निद्राप्रिय बहुत बलशाली नहीं था, फिर भी बहुत संभव था कि मौक़ा पा कर वह सर्वोत्तम के राज्य पर हमला कर दे।

सर्वोत्तम ने मन-ही-मन सोचा कि वह स्वयं ही अपने कर्मचारियों में छिपे शत्रुदेश के गुप्तचर को ढूँढ़ लेगा। कुछ दिन तक राजा ने अंत:पुर के कर्मचारियों पर नज़र रखी। पर उसे इस काम में सफलता नहीं मिली। उसे लगा कि सभी अपने प्रति खूब श्रद्धा-भक्ति रखते हैं और उन सब की राज-भक्ति के बारे में उसे पूरा विश्वास हुआ। इस तरह राजद्रोही को पकड़ना राजा के लिए टेढ़ी खीर हो गया।

विदूषक चारुहास वास्तव में बड़ा बुद्धिमान था। एक दिन राजा ने उस को बुलाया और सारी बातें बता कर कहा– "चारुहास, जैसे बने अंत:पुर के कर्मचारियों में छिपे कपटी, धोखेबाज़, देशद्रोही को तुरन्त ढूँढ़ निकालना चाहिए। अगर अपने आसपास शत्रु के गुप्तचर रहें तो ये आस्तीन के साँप जाने कैसे हमें धोखा देंगे! उचित समय पर ही इन का पता लगाकर निकाल फेंकना ज़रूरी है।"

मुस्कराते हुए चारुहास ने कहा– "प्रभु, यह तो मेरे बाएँ हाथ का खेल है। अगर

रामप्रसाद पाठक

सचमुच अंतःपुर में शत्रु का कोई गुप्तचर हो तो मैं उसे यों ढूँढ़ निकालूँगा ।" फिर अंतःपुर में सभी कर्मचारियों को राजा के सामने उपस्थित होने का आदेश दिया गया ।

शीघ्र ही अंतःपुर के सभी कर्मचारी राजा के दरबार में हाज़िर हुए । चारुहास ने इन से कहा– "तुम सब जानते ही हो कि देश का शासन करनेवाले राजा को रोज़ कैसी-कैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है । क्या यह हमारा कर्तव्य नहीं कि हम अपने राजा को चैन के साथ बिताने का कुछ समय दें? जब तक राजा यों आश्वस्त नहीं होता कि अपने आसपास के सभी लोग राजभक्त और विश्वस्त हैं, तब तक राजा कैसे बेफ़िक्र हो सुख-चैन से आराम कर सकता है? तुम सभी राजभक्त हो, विश्वस्त हो, ईमानदार हो । यह राजा का बड़ा सौभाग्य है कि तुम्हारे जैसे कर्मचारी मिले हैं । अब तुम लोग राजा के पाँव पड़ कर नमस्कार करो, फिर राजा की चारों ओर परिक्रमा करो । मैं चाहता हूँ कि तुम यों अपनी राजभक्ति का प्रदर्शन करो ।"

उस वक़्त वहाँ छह कर्मचारी उपस्थित थे । उन में से दो कर्मचारी तुरन्त आगे आये और राजा के पाँव पड़े । उन्हों ने राजा की प्रदक्षिणा की और एक ओर हट कर खड़े हो गये ।

राजा सर्वोत्तम मौन हो शांति के साथ चुपचाप सब देखता जा रहा था ।

चारुहास ने अन्य कर्मचारियों की तरफ़ देखते हुए पूछा– "तुम्हारी क्या बात है? तुम राजा की परिक्रमा क्यों नहीं करते?"

मगर उन कर्मचारियों ने कुछ नहीं कहा । चुपचाप सिर नवाये खड़े रहे । चारुहास ने और एक बार पूछा, फिर भी वे चुप्पी साधे खड़े रहे ।

अब चारुहास को ग़ुस्सा आया । उस ने कहा– "राजा के पैर पड़ने के लिए मैं कह रहा हूँ, तुम सुनते क्यों नहीं हो? जल्दी करो, वरना सूली पर चढ़ा दूँगा तुम सब को! समझे?"

यों धमकाने पर वे चारों कर्मचारी आगे बढ़े और राजा के पाँव पड़ने तैयार हुए ।

तब चारुहास ने उन्हें रुकने के लिए कहा । वे रुक गये । तब विदूषक ने राजा से

कहा– ''महाराज, पहले आप के पाँव पड़ कर जिन दो कर्मचारियों ने आप की प्रदक्षिणा की, वे ही राजद्रोही हैं। शत्रुओं से मिले गुप्तचर अवश्य वे ही दोनों हैं, इस में मुझे ज़रा भी संदेह नहीं है।''

राजा इस दलील पर चकित हुआ। उसने पूछा– ''तुम यह कैसे साबित कर सकते हो कि वे ही दो राजद्रोही हैं?''

इस के जवाब में चारुहास ने कहा– ''प्रभु, जो कपटी और ढोंगी होते हैं, वे ही हमेशा अपने असली रूप पर पर्दा डाल रखते हैं। इस कोशिश में वे हर पल अपनी झूठी राजभक्ति दिखाने को तत्पर रहते हैं। कोई छोटा-सा मौक़ा भी चूकने नहीं देते।''

''बाकी चारों कर्मचारियों की क्या बात है?'' राजा ने आश्चर्य से पूछा।

विदूषक ने कहा– ''वे ही असली राजभक्त हैं। ऐसे लोगों में अपनी राजभक्ति सब के सामने दिखाने की इच्छा नहीं होती। इतना ही नहीं, आप का आदर करने या आप के प्रति श्रद्धा-भक्ति प्रकट करने की भी इन की अपनी अपनी सीमाएँ होती हैं। आप की परिक्रमा करने के लिए मैं ने इन से कहा था। जिन का व्यक्तित्व ऊँचा हो, जो स्वाभिमानी हों, वे कदापि ऐसा काम नहीं करेंगे। एक सुभषित भी है– 'अतिविनयम् धूर्तलक्षणम्!' इन के बारे में इस से अधिक कहने की ज़रूरत नहीं है।''

विदूषक की बातों का औचित्य राजा के ध्यान में आया। उस ने गुप्तचरदल के प्रमुख को बुलाया और आदेश दिया कि उन दो संभाव्य राजद्रोहियों की जाँच कर के वास्तव स्थिति का पता लगाया जाए।

गुप्तचरदल के प्रमुख ने उन दोनों को एक अलग कमरे में ले जाकर, उन्हें डराया-धमकाया और असलियत जान ली। वे ही पड़ोसी राजा निद्राप्रिय के गुप्तचर थे।

उन्हों ने अपना अपराध स्वीकार किया।

राजा ने उन दोनों को देश-निकाले की सज़ा दी। उन से कहा गया कि कभी भूल कर भी इस राज्य में कदम न रखें। फिर बुद्धिमान और सूक्ष्मग्राही चारुहास की भूरि। भूरि प्रशंसा की, और उस का सत्कार भी किया।

शेर प्रति घण्टा चालीस मील की रफ़्तार से दौड़ सकता है और एक ही छलाँग में चालीस फुट का फासला लाँघ सकता
मृगराज
है । जंगल में रहनेवाला शेर अपने उदरनिर्वाह के लिए सप्ताह में १० किलो गोश्त खाता है ।

एक उपनिवेश
'पोर्तुगल का योद्धा' (पोर्तुगीज़ मैन आफ वॉर) वास्तव में सैकड़ों अलग अलग जंतुओं से निर्मित एक उपनिवेश ही होता है । यह एक तरह का पानी का पौधा (कोरल) है जिस में 'फ्लोट' सब से बड़ा होता है । इसकी लंबाई ३ से १० इंच तक होती है । आहार लेने पर इसमें बसे सभी अलग अलग प्राणियों को पोषक पदार्थ अपने आप पहुँच जाते हैं ।

सन् १९२० ईसवीं में न्यूयार्क के 'ब्रांक्स' चिडियाघर' ने १५,००० डालर के एक पुरस्कार की घोषणा की । लेकिन आज तक कोई भी यह पुरस्कार जीत नहीं सका है । यह पुरस्कार ३० फुट से भी ज़्यादा लंबा साँप ला देने वाले के लिये है । काश, किसी को मिल जाय!
पुरस्कार

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. ८१/- वायु सेवा से रु. १५६/-

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. ८७/- वायु सेवा से रु. १५६/-

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्रॉफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ नवम्बर १९९० के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Devidas Kasbekar

Brahm Dev

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ सितम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जुलाई १९९० की प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम फोटो: मिट्टी से जादू दिखलाऊँ!

द्वितीय फोटो: चित्र बनाना मैं सिखलाऊँ!!

प्रेषक: एस. बी. शारदा रमणी, ५३७/५, बागबेडा रेल्वे कॉलोनी, टाटानगर-८३१ ००२.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा: रु. ३६/-

चन्दा भेजने का पता:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

The stories, articles and designs contained herein are exclusive property of the Publishers and copying or adapting them in any manner will be dealt with according to law.
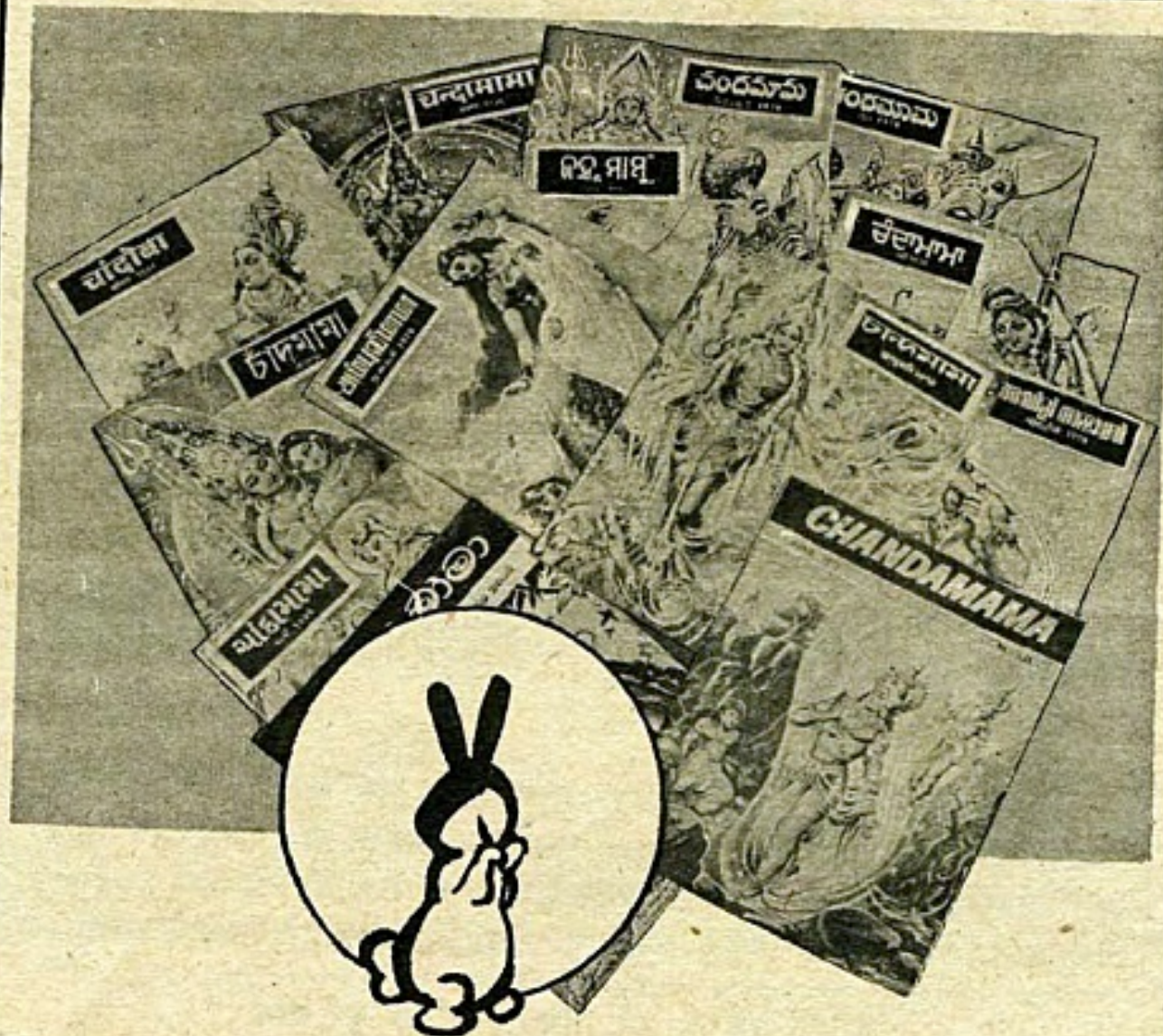
चन्दामामा

जो प्रकट करती है भारत का महान वैभव—अतीत और वर्तमान का—सुंदर सुंदर कथाओं द्वारा महीने बाद महीने ।

रंगीन चित्रों से सजकर ६४ पृष्ठों में फैली यह पत्रिका प्रस्तुत करती है चुनी हुई कई रोचक-प्रेरक पुराण कथाएँ, लोक कथाएँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, महान विभूतियों की जीवन-झलकियाँ, आज की अनेक मोहक कथाएँ और जानने की बातें जो हों सचमुच काम की ।

निकलती है ११ भाषाओं में और संस्कृत में भी ।

चन्दे की जानकारी के लिए लिखें इस पते पर:

डाल्टन एजन्सीज, १८८ एन.एस.के. रोड, मद्रास-६०० ०२६.

NOW with the added fun of SPUTNIK Junior!

Selections from Sputnik Junior!.

* Colourfully illustrated stories and cartoons.
* Superb science fiction
* Entertainment and general knowledge

64 packed pages!
At just Rs. 5/-

Sputnik Junior

To subscribe write to,
JUNIOR QUEST,
Dolton Agencies,
Chandamama Buildings,
N.S.K. Salai, Vadapalani,
Madras: 600 026.

A Chandamama Vijaya Combines publication

मीठी-मीठी बात आम-बगिया के
मिट्ठू के साथ
ए देख! मेरी नई मैंगो स्वीट!
ए देख! मेरी नई मैंगो स्वीट!
बताऊँ मिट्ठू! इसमें असली आम है!
बताऊँ मिट्ठू! इसमें असली आम है!
शुऽऽऽऽऽप बदमाश! मेरी एक-नई मैंगो स्वीट खाकर देख!
शुऽऽऽऽऽप बदमाश! मेरी एक-नई मैंगो स्वीट खाकर देख!
पता है? इसका नाम क्या है? (????)
आम-रस!
क्या कहा! फिर बताना. (????)
आऽऽऽऽऽम-रऽऽऽऽऽस! बस, बच्चू! अमृत वचन बार-बार नहीं बोले जाते!
ही... ही... ही!
न्यूट्रीन
आम-रस
अंदर असली आम बंद,
बाहर अपार आनंद ... हरेक में,
मिट्ठू जैसे रंग-बिरंगे पैक में.
असलियत में असली आम
THE FINEST, WIDEST RANGE
nutrine
India's largest selling sweets
Visesh/NC/8940/Hin